केवल ई-संस्करण
(हिंदी)

सीसीआरएएस बुलेटिन

केन्द्रीय आयुर्वेदीय विज्ञान अनुसंधान परिषद
आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

जनवरी – मार्च 2026 | खंड – 3 | अंक – 1 | https://ccras.nic.in/ccras-bulletin/

संपादक - मंडल

मुख्य संपादक
प्रो. वैद्य रबीनारायण आचार्य
महानिदेशक, सीसीआरएएस, नई दिल्ली

उप-मुख्य संपादक
डॉ. नारायणम श्रीकांत
उप महानिदेशक, सीसीआरएएस नई दिल्ली

कार्यकारी संपादक
श्री नौशाद अहमद
LIO & I/c प्रकाशन और मीडिया संपर्क

सहयोगी संपादक
डॉ. ए.के. मीना, सहा. निदे (रसायन विज्ञान)
डॉ. रेनू सिंह, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. राकेश नारायणन, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. दीपक लांबा, अनुसन्धान अधिकारी (औषध विज्ञान)
डॉ. धीरज सिंह राजपूत, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ एमी. एस सुरेंद्रन, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. अरविंद कुमार, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. नीथू केसवन, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. आशिमा जैन, अनुसन्धान अधिकारी (पैथोलॉजी))
डॉ. लिजिमा सी, अनुसन्धान अधिकारी (आयुर्वेद)
डॉ. यशपाल भारद्वाज अनुसन्धान अधिकारी (वनस्पति विज्ञान)
श्री कमलेश्वर सिंह, सहायक अनुसन्धान अधिकारी (वनस्पति विज्ञान)
सुश्री प्रीति शर्मा सहायक अनुसन्धान अधिकारी (रसायन विज्ञान)

क्षेत्रीय भाषा संपादक
असमिया
डॉ. जिउती रानी दास, अनु. अधि. (आयु.), सीएआरआई गुवाहाटी
कन्नडा
डॉ. भव्या बी.एम., अनु. अधि. (आयु.), सीएआरआई बेंगलुरु
पंजाबी
डॉ. हरबंस सिंह, अनु. अधि. (आयु.), प्रभारी, आरएआरआई जम्मू
उर्दू
डॉ. अशफाक अहमद, अनु. अधि. (आयु.), एनआईआईएमएच हैदराबाद
मलयालम
डॉ. वीसी दीप, सहा. निदे. (आयु.), एनएआरआईपी चेरुथुरुथी
तमिल
श्री सी प्रेम कुमार, सहा. अनु. अधि, सीएसएमसीएआरआई चेन्नई
गुजराती
डॉ. सोजित्रा निरल, अनु. अधि. (आयु.), आरएआरआई अहमदाबाद
मराठी
डॉ. रसिका कोल्हे, अनु. अधि. (आयु.), आरएआरआई पुणे
बंगाली
डॉ. श्रेया दत्ता, अनु. अधि. (बॉट.), सीएआरआई कोलकाता
हिंदी
डॉ. वीके लवानिया, अनुसन्धान अधिकारी, सीसीआरएएस मुख्यालय दिल्ली
उड़िया
डॉ. बनमाली दास, अनु. अधि. (आयु.), सीएआरआई भुवनेश्वर
तेलुगू
डॉ. श्रीदेवी वेनिगला,अनु. अधि. (आयु.), एनआईआईएमएच हैदराबाद

तकनीकी सहायता
डॉ. तानिया रे, वैज्ञानिक लेखिका

ग्राफिक डिजाइनर
मो. हारून अंसारी, ग्राफिक डिजाइनर

इस अंक में शामिल विषय

संपादकीय संदेश	पृष्ठ संख्या
शास्त्रीय ज्ञान से आधुनिक साक्ष्यों तक: सीसीआरएएस (CCRAS) बुलेटिन समकालीन युग में आयुर्वेद की व्यावहारिक क्षमता का प्रदर्शन करता है।	1
नैदानिक अनुसंधान	
पुष्यानुग चूर्ण बैक्टीरियल वेजिनोसिस के प्रबंधन में आशाजनक नैदानिक परिणाम दिखाता है।	3
छोटे कदम, बड़ी राह: ग्वालियर के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य और आदतों में सुधार	3
चिकित्सीय सहमति सुरक्षित और मानकीकृत 'मर्श नस्य' चिकित्सा के लिए एक मार्ग प्रशस्त करती है।	4
हाल ही में हुए एक अध्ययन ने त्रयोदशांग गुग्गुलु की सुरक्षा के प्रमाण प्रदान किए हैं – जो कि मांसपेशियों और हड्डियों (मस्कुलो-स्केलेटल) से संबंधित रोगों के उपचार के लिए निर्देशित एक सुप्रसिद्ध आयुर्वेदिक औषधि है।	5
नैदानिक अध्ययन ने डिजिटल आई फटीग (आंखों की थकान) के प्रबंधन में आयुर्वेद की भूमिका पर प्रकाश डाला।	6
केस स्टडी से पता चलता है कि आयुर्वेद की अग्निकर्म (ऊष्मीय) चिकित्सा माइग्रेन के दर्द में तेजी से राहत देने की संभावनाएँ दर्शाती है।	7
स्वास्थ्य प्रणाली अनुसंधान	
तमिलनाडु की जनजातीय समुदायों में गैर-संचारी रोगों के छिपे बोझ का अध्ययन में खुलासा हुआ	8
औषधीय एवं जैव रासायनिक अनुसंधान	
एक पूर्व-नैदानिक अध्ययन: आयुर्वेदिक बहु-औषधीय संरचना "श्वदंष्ट्रादि घन" दवाओं से होने वाली क्षति से गुर्दों (किडनी) की रक्षा करने में आशाजनक परिणाम दिखाती है।	9
एगल मार्मेलोस (बिल्व) के पत्तों के अर्क का उपयोग करके Co_3O_4 नैनोकणों का जैविक संश्लेषण (Biogenic Synthesis), जैव-चिकित्सा और पर्यावरणीय अनुप्रयोगों के लिए आशाजनक परिणाम दिखाता है।	10
औषधि अनुसंधान एवं चिकित्सा पादप सर्वेक्षण	
सिसस क्वाड्रैंगुलरिस एल. में कैंसर, सूजन (इन्फ्लेमेशन) और जीवाणुरोधी (एंटीमाइक्रोबियल) अनुसंधान में मजबूत संभावनाएँ दिखाई देती हैं।	11
पर्यावरण-अनुकूल बदलाव: भविष्य की औषधियों के लिए बीजक वृक्ष (पटेरोकार्पस मार्सुपियम रॉक्सब) में हार्टवुड(सार-काष्ठ) के बजाय 'टहनियों' के उपयोग को अध्ययन का समर्थन।	12
वन ज्ञान: जनजातीय जानकारी से केरल में छिपी औषधीय पौधों की विविधता का खुलासा	13
अध्ययन से पता चला कि स्थान का महत्व है: रानीखेत (हिमालय) में उगाई गई पिप्पली (*पाइपर लोंगम लिन*) में औषधीय क्षमता अधिक पाई गई है।	14
साहित्यिक अनुसंधान	
सीसीआरएएस (CCRAS) की पुस्तक "Ayurveda based clinical methods for examination of Prameha Roga" (प्रमेह रोग के परीक्षण के लिए आयुर्वेद आधारित नैदानिक विधियां), प्रमेह (मधुमेह/Diabetes) के आयुर्वेदिक निदान में वैज्ञानिक सटीकता प्रस्तुत करती है।	14

संपादकीय संदेश

शास्त्रीय ज्ञान से लेकर आधुनिक साक्ष्य तकः सीसीआरएएस बुलेटिन समकालीन युग में आयुर्वेद की व्यावहारिक क्षमता को दर्शाता है

प्रो. (वैद्य) रबीनारायण आचार्य
मुख्य संपादक, सीसीआरएएस बुलेटिन
महानिदेशक
सीसीआरएएस, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

सीसीआरएएस (CCRAS) बुलेटिन परिषद के अनुसंधानों से प्राप्त साक्ष्य-आधारित योगदानों का प्रसार करता है, जो आयुर्वेद के एक पारंपरिक अभ्यास से साक्ष्य-संचालित (evidence-driven) और अनुसंधान-उन्मुख स्वास्थ्य सेवा अनुशासन की ओर निरंतर हो रहे परिवर्तन को दर्शाता है। इस अंक में नैदानिक परीक्षण (clinical trials), औषधीय अध्ययन, औषधि अनुसंधान, सार्वजनिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण और साहित्यिक अनुसंधान शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक आयुर्वेद के व्यावहारिक आयामों को प्रदर्शित करता है।

नैदानिक अनुसंधानः

आम सहमति का विकास और मानकीकरण

इस अंक का एक मौलिक योगदान मर्श नस्य (Marsha Nasya) चिकित्सा के लिए नैदानिक आम सहमति दिशानिर्देशों का विकास है। यह एक पंचकर्म प्रक्रिया है जिसमें औषधीय तेलों को नाक के मार्ग से दिया जाता है। नैदानिक अभ्यास में एकरूपता सुनिश्चित करने, जोखिमों को कम करने और विभिन्न परिस्थितियों में चिकित्सीय परिणामों की पुनरावृत्ति (reproducibility) को बढ़ाने के लिए प्रक्रियात्मक प्रोटोकॉल का मानकीकरण अनिवार्य है। आयुर्वेदिक प्रक्रियाओं को मुख्यधारा और एकीकृत स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों में प्रोटोकॉल-आधारित समावेश की दिशा में, आम सहमति से निर्मित यह ढांचा एक आवश्यक कदम है।

नैदानिक परीक्षणः प्रभावकारिता और उपयोगिता

बैक्टीरियल वैजिनोसिस (एक ऐसी स्थिति जिसकी वैश्विक स्तर पर उच्च प्रचलनता और पुनरावृत्ति पाई जाती है) के प्रबंधन में पुष्यानुग चूर्ण के मूल्यांकन हेतु किए गए एक नैदानिक परीक्षण में आशाजनक चिकित्सीय परिणाम सामने आए हैं। ये निष्कर्ष महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये एक समग्र (होलिस्टिक) विकल्प प्रस्तुत करते हैं, जो पारंपरिक एंटीबायोटिक्स पर निर्भरता तथा उनसे जुड़े दुष्प्रभावों को कम करने में सहायक हो सकता है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल आई फटीग (लंबे समय तक स्क्रीन उपयोग से संबंधित एक उभरता हुआ जीवनशैली विकार) के आयुर्वेदिक प्रबंधन पर किए गए एक नैदानिक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शास्त्रीय औषधीय संयोजन आधुनिक स्वास्थ्य चुनौतियों के अनुरूप ढलने में सक्षम हैं, जहां पारंपरिक उपचार विकल्प सीमित और मुख्यतः लक्षणों तक ही सीमित राहत प्रदान करते हैं।

सुरक्षा मूल्यांकन

स्थापित आयुर्वेदिक यौगिकों के साक्ष्य-आधार को सुदृढ़ करते हुए, त्रयोदशांग गुग्गुलु—जो एक शास्त्रीय औषधि है और व्यापक रूप से मस्कुलोस्केलेटल (अस्थि-मांसपेशीय) विकारों में प्रयुक्त होती है—का सुरक्षा मूल्यांकन व्यवस्थित रूप से उत्पन्न सुरक्षा डेटा प्रदान करता है, जो इसके व्यापक नैदानिक उपयोग का समर्थन करता है। साक्ष्य-आधारित चिकित्सा में सुरक्षा प्रोफाइलिंग एक आधारशिला है; इस तरह का दस्तावेज़ीकरण चिकित्सकों और रोगियों के आत्मविश्वास को मजबूत करता है और शास्त्रीय आयुर्वेदिक यौगिकों के व्यवस्थित सत्यापन के लिए एक अनुकरणीय मॉडल के रूप में कार्य करता है।

केस रिपोर्ट (मामला विवरण)

यह केस रिपोर्ट अग्निकर्म चिकित्सा—जो कि एक आयुर्वेदिक थर्मल कॉटरी (ऊष्मीय दहन) प्रक्रिया है—के उपयोग का दस्तावेजीकरण करती है। इसमें माइग्रेन के एक गंभीर दौरे में तेजी से और उल्लेखनीय राहत दर्ज की गई है। माइग्रेन, जो अत्यधिक रुग्णता (मॉर्बिडिटी) से जुड़ा है और जिसमें मरीजों के एक बड़े वर्ग को दवाओं से सीमित सफलता ही मिल पाती है, एक ऐसी स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ न्यूनतम आक्रामक (मिनिमली इनवेसिव) और कम लागत वाली आयुर्वेदिक हस्तक्षेप महत्वपूर्ण नैदानिक सहायता प्रदान कर सकते हैं। यद्यपि एकल मामले के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकालना सावधानी की मांग करता है, फिर भी यह अवलोकन भविष्य में नियंत्रित शोध के लिए एक ठोस परिकल्पना प्रस्तुत करता है।

स्वास्थ्य प्रणाली और सामुदायिक अनुसंधानः

स्वास्थ्य प्रणालियों के शोध (Health systems research) तमिलनाडु के जनजातीय समुदायों के बीच गैर-संचारी रोगों (NCDs) के छिपे हुए बोझ पर प्रकाश डालते हैं। यह दर्शाता है कि खराब स्वच्छता, असुरक्षित पेयजल, कम साक्षरता और स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच स्वास्थ्य परिणामों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है। ये चुनौतियां लगातार बनी रहने वाली संक्रामक बीमारियों और कुपोषण के साथ मौजूद हैं, जो स्वास्थ्य पर दोहरा बोझ पैदा करती हैं। सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों (NGO) के प्रयासों से हुए सुधारों के बावजूद, बुनियादी ढांचे और स्वास्थ्य सेवाओं के वितरण में बड़ी कमियां अभी भी बनी हुई हैं। स्वच्छता का कम उपयोग और पोषण के प्रति जागरूकता की कमी जैसे व्यवहार संबंधी मुद्दे कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को कम करते हैं। शोध के निष्कर्ष अनुसूचित जनजातियों जैसे-

कमजोर समूहों के लिए समावेशी सार्वजनिक स्वास्थ्य रणनीतियों की आवश्यकता पर जोर देते हैं। शोधकर्ता सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील हस्तक्षेप, बेहतर प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल और बेहतर जल एवं स्वच्छता की सिफारिश करते हैं। वे पोषण शिक्षा बढ़ाने, साक्षरता में सुधार और शुरुआती पहचान एवं प्रबंधन के लिए गैर-संचारी रोगों (NCD) की जांच के विस्तार का भी आह्वान करते हैं।

औषधीय एवं जैव-रसायन अनुसंधान:

श्वदंष्ट्रादि घन, जो एक बहु-औषधीय आयुर्वेदिक योग है, पर किए गए एक प्री-क्लिनिकल अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि इसमें दवाओं से उत्पन्न गुर्दा क्षति के विरुद्ध नेफ्रोप्रोटेक्टिव (किडनी -संरक्षक) प्रभाव की संभावना है — यह निष्कर्ष बढ़ती हुई आयट्रोजेनिक नेफ्रोटॉक्सिसिटी (चिकित्सकीय कारणों से होने वाली किडनी विषाक्तता) को देखते हुए चिकित्सकीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

एगल मार्मेलोस (बिल्व) का उपयोग करके Co_3O_4 नैनोकणों के जैव-उत्पादन पर शोध, नैनोप्रौद्योगिकी और पर्यावरण विज्ञान में आयुर्वेद की प्रासंगिकता को प्रदर्शित करता है।

औषधि अनुसंधान एवं औषधीय पादप सर्वेक्षण:

सिसस क्वाड्रैंगुलरिस (अस्थिसंहार) की एक व्यापक औषधीय समीक्षा इसके बहु-आयामी जैविक प्रभाव पर प्रकाश डालती है, जिसमें कैंसर-रोधी, सूजन-रोधी (एंटी-इन्फ्लेमेटरी) और रोगाणुरोधी गुण शामिल हैं। ये गुण इसे भविष्य की दवा विकास प्रक्रियाओं के लिए एक प्राथमिकता वाले विकल्प के रूप में स्थापित करते हैं।

इसके अतिरिक्त, हिमालय के रानीखेत क्षेत्र में उगाए गए पाइपर लोंगम लिन (पिप्पली) पर किए गए एक अध्ययन से पता चलता है कि भौगोलिक मूल (स्थान) दवा की औषधीय क्षमता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है—यह आयुर्वेदिक कच्चे माल की सोर्सिंग और फार्माकोपियल (औषधकोश) विशिष्टताओं के गुणवत्ता मानकीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण विचार है।

संसाधनों का सतत उपयोग

पटेरोकार्पस मार्सुपियम रॉक्सब (बीजक) पर एक अध्ययन यह सुझाव देता है कि औषधीय तैयारियों के लिए हृदयकाष्ठ (हार्टवुड) के बजाय शाखाओं का उपयोग किया जाए, जो संसाधनों के उपयोग के प्रति वैज्ञानिक रूप से सूचित और पर्यावरण के प्रति सजग दृष्टिकोण को दर्शाता है। इससे इस मूल्यवान औषधीय प्रजाति की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित होती है, बिना इसकी चिकित्सीय गुणवत्ता से समझौता किए या पर्यावरणीय क्षरण में योगदान दिए।

पारंपरिक पौधों का दस्तावेज़ीकरण (एथनोबोटैनिकल दस्तावेज़)

केरल में जनजातीय औषधीय ज्ञान का दस्तावेजीकरण करने वाला एक व्यवस्थित सर्वेक्षण, पारंपरिक रूप से उपयोग की जाने वाली पौधों की प्रजातियों और स्वदेशी उपचार पद्धतियों की समृद्ध विविधता को उजागर करता है।

साहित्यिक अनुसंधानः

प्रमेह (मधुमेह) के परीक्षण के लिए आयुर्वेद-आधारित नैदानिक विधियों पर सीसीआरएएस का प्रकाशन एक व्यवस्थित और वैज्ञानिक रूप से व्याख्या करने योग्य ढांचा प्रस्तुत करता है, जो एकीकृत स्वास्थ्य सेवा के भीतर आयुर्वेद की नैदानिक सटीकता और विश्वसनीयता को बढ़ाता है।

इस अंक में प्रस्तुत अध्ययन सामूहिक रूप से एक ऐसे अनुशासन को दर्शाते हैं जो परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। आयुर्वेद को अब केवल परंपरा के दृष्टिकोण से नहीं देखा जा रहा है; बल्कि इसे लगातार कठोर प्रायोगिक सत्यापन, व्यवस्थित डेटा निर्माण और गंभीर वैज्ञानिक समीक्षा के अधीन रखा जा रहा है। यह विकास आयुर्वेद के मुख्यधारा की स्वास्थ्य सेवाओं में सार्थक एकीकरण के लिए अत्यंत आवश्यक है, जहाँ साक्ष्य-आधारित अभ्यास ही प्रमुख मानक माना जाता है।

हालाँकि कई अध्ययन प्रारंभिक स्तर पर हैं और बड़े बहु-केंद्रित परीक्षणों की आवश्यकता है, फिर भी दिशा स्पष्ट है।कठोर अनुसंधान, अंतःविषय सहयोग और जनस्वास्थ्य की प्रासंगिकता पर ध्यान केंद्रित करते हुए, CCRAS प्राचीन ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के बीच सेतु का कार्य करता रहा है, जिससे आयुर्वेद को एक विश्वसनीय, साक्ष्य-आधारित चिकित्सा पद्धति के रूप में स्थापित किया जा रहा है।

पुष्यानुग चूर्ण बैक्टीरियल वैजिनोसिस के प्रबंधन में आशाजनक नैदानिक परिणाम दिखाए

पुष्यानुग चूर्ण का उपयोग पारंपरिक रूप से आयुर्वेद में 'श्वेतप्रदर' के प्रबंधन के लिए उपयोग किया जाता है। श्वेतप्रदर एक ऐसी अवस्था है जिसमें अत्यधिक सफेद योनि स्राव होता है, जो आधुनिक चिकित्सा में बैक्टीरियल वेजिनोसिस के समान माना जाता है। इसमें कसैले (Astringent), सूजन-रोधी (Anti-inflammatory) और जीवाणुरोधी (Antimicrobial) गुण होते हैं, जो स्राव को कम करने, दुर्गंध को नियंत्रित करने तथा खुजली और जलन जैसे संबंधित लक्षणों को कम करने में सहायक होते हैं। चिकित्सकीय देखरेख में इसका नियमित उपयोग योनि स्वास्थ्य को पुनर्स्थापित करने और समग्र प्रजनन स्वास्थ्य में सुधार करने में सहायक माना जाता है।

केन्द्रीय आयुर्वेदीय विज्ञान अनुसंधान परिषद (CCRAS) के अंतर्गत किए गए एक नैदानिक अध्ययन में श्वेतप्रदर (बैक्टीरियल वैजिनोसिस), जो प्रजनन आयु की महिलाओं को प्रभावित करने वाली एक सामान्य स्त्रीरोग संबंधी स्थिति है, के प्रबंधन में पुष्यानुग चूर्ण की सुरक्षा और चिकित्सीय प्रभावकारिता के संबंध में उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य पारंपरिक आयुर्वेदिक ढांचे के अंतर्गत एक शास्त्रीय औषधीय योग का नैदानिक मानकों के आधार पर मूल्यांकन करना था।

अध्ययन में 18 से 40 वर्ष आयु की 80 महिला प्रतिभागियों को शामिल किया गया, जिनका नैदानिक रूप से बैक्टीरियल वैजिनोसिस का निदान किया गया था और जिनमें असामान्य श्वेत योनि स्राव जैसे विशिष्ट लक्षण उपस्थित थे। उपचार प्रोटोकॉल के अंतर्गत पुष्यानुग चूर्ण की 3 ग्राम मात्रा दिन में दो बार, भोजन के बाद तण्डुलोदक (चावल धोया हुआ पानी) के साथ 60 दिनों तक मौखिक रूप से दी गई। रोगियों का मूल्यांकन उपचार अवधि के दौरान प्रत्येक 15 दिन के अंतराल पर किया गया, तथा उपचार के पश्चात 90 दिनों पर अनुवर्ती (फॉलो-अप) परीक्षण किया गया, ताकि उपचार के प्रभावों की स्थिरता का आकलन किया जा सके।

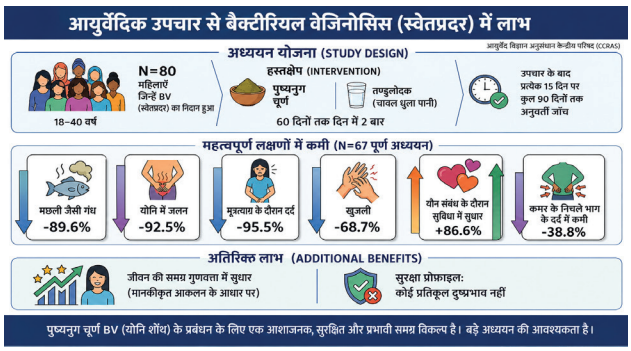

(एआई द्वारा बनाई गई छवि)

नामांकित प्रतिभागियों में से, 67 लोगों ने उपचार और फॉलो-अप (अनुवर्ती जांच) का पूरा कोर्स किया। नैदानिक मूल्यांकन से विभिन्न लक्षणात्मक रोग-संबंधी क्षेत्रों में सांख्यिकीय एवं नैदानिक रूप से महत्वपूर्ण सुधार प्रदर्शित हुए। बैक्टीरियल वैजिनोसिस की एक प्रमुख विशेषता, दुर्गंध (मैलोडर) का समाप्त होना लगभग 89.6% प्रतिभागियों में देखा गया। योनि में जलन की अनुभूति में कमी 92.5% रोगियों द्वारा बताई गई, जबकि 95.5% ने मूत्रत्याग के समय होने वाले दर्द (डिस्यूरिया) से राहत का अनुभव किया। इसके अतिरिक्त, 68.7% प्रतिभागियों ने वुल्वोवैजाइनल खुजली में सुधार की सूचना दी। कार्यात्मक परिणामों में भी सकारात्मक प्रवृत्तियाँ देखी गईं, जहाँ 86.6% महिलाओं ने यौन क्रिया के दौरान आराम में सुधार बताया और 38.8% ने संबंधित कमर दर्द में कमी नोट की।

जीवन की गुणवत्ता के आकलन इस हस्तक्षेप के बाद समग्र रूप से उल्लेखनीय सुधार दर्शाया, जो लक्षणों में राहत तथा दैनिक क्रियाशीलता में वृद्धि दोनों को दर्शाता करता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि पूरे अध्ययन अवधि के दौरान किसी भी प्रतिकूल औषधि प्रतिक्रिया या सुरक्षा संबंधी चिंता की सूचना नहीं मिली, जिससे इस औषधि के लिए अनुकूल सहनशीलता प्रोफ़ाइल का संकेत मिलता है।

अनुसंधानकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला कि पुष्यानुग चूर्ण, समेकित चिकित्सा ढांचे के अंतर्गत बैक्टीरियल वैजिनोसिस के प्रबंधन में एक सुरक्षित और प्रभावी चिकित्सीय विकल्प के रूप में महत्वपूर्ण संभावनाएँ दर्शाता है। हालांकि, उन्होंने इन निष्कर्षों की और पुष्टि करने तथा स्थापित पारंपरिक उपचारों के साथ इसकी प्रभावशीलता की तुलना करने के लिए बड़े पैमाने पर नियंत्रित नैदानिक परीक्षणों की आवश्यकता पर जोर दिया।

संदर्भ स्रोत: शर्मा एस, जैन एस, ओटा एस, त्रिपाठी ए, शिंदे पी, वाकोडे वी, राजपूत एस, राणा आर, शर्मा बीएस, खंडूरी एस, कुमार ए। बैक्टीरियल वेजिनोसिस (Bacterial Vaginosis) के प्रबंधन में 'पुष्यानुग चूर्ण' का नैदानिक मूल्यांकन: एक भावी एकल-शाखा बहुकेंद्रित पायलट अध्ययन (प्रॉस्पेक्टिव सिंगल-आर्म मल्टीसेंटर पायलट स्टडी)। जर्नल ऑफ रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंसेज, 1 जुलाई 2025; 9(4): 152–160.

संदर्भ लिंक (Reference Link): https://journals.lww.com/jras/fulltext/2025/07000/clinical_evaluation_of_pushyanug_churna_in_the.3.aspx

छोटे कदम, बड़ी राह: ग्वालियर के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य और आदतों में सुधार

ग्वालियर जिले के पाँच गाँवों में किए गए एक बड़े सामुदायिक सर्वेक्षण से महिलाओं के स्वास्थ्य और जीवन स्तर में सकारात्मक प्रगति के साथ-साथ उन क्षेत्रों का भी पता चला है जहाँ अभी सुधार की आवश्यकता है। इन गाँवों के अधिकांश निवासी अनुसूचित जाति (SC) समुदायों से हैं। यह अध्ययन दिसंबर 2018 से दिसंबर 2019 के बीच किया गया था। शोधकर्ताओं ने घर-घर जाकर 4,402 लोगों से जानकारी एकत्र की, जिनमें 2,573 महिलाएँ और 1,829 बच्चे शामिल थे। एक संरचित प्रश्नावली का उपयोग करते हुए, उन्होंने आवास की स्थिति, शिक्षा, मासिक धर्म और गर्भावस्था का इतिहास, नशे की आदतें, और महिलाएँ किस प्रकार स्वास्थ्य सेवाएँ प्राप्त करती हैं, जैसी जानकारी एकत्र की। बच्चों के लिए, सर्वेक्षण में उनकी शिक्षा, टीकाकरण की स्थिति, सामान्य बीमारियाँ, वृद्धि और विकास का भी अध्ययन किया गया।

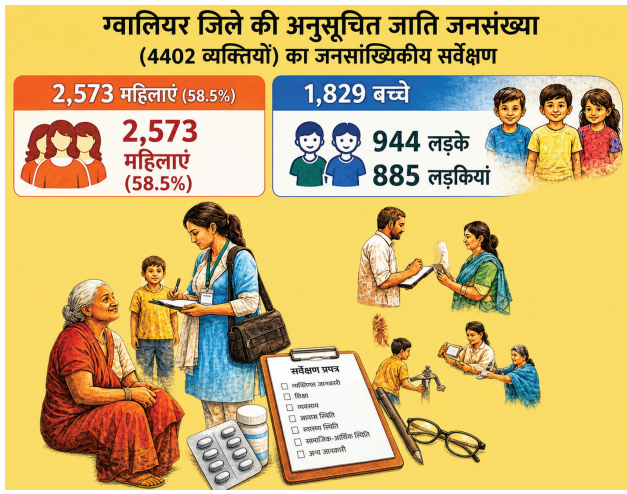

चित्र स्रोत: एआई द्वारा उत्पन्न छवि

सर्वेक्षण में शामिल महिलाओं में से लगभग 35% ने मासिक धर्म के दौरान दर्द (painful periods) होने की बात कही, जबकि 14% ने कहा कि उनका मासिक चक्र अनियमित था। सकारात्मक पक्ष यह है कि लगभग 90% प्रसव अस्पतालों या स्वास्थ्य संस्थानों में हुए, जो संस्थागत मातृत्व सेवाओं के बढ़ते उपयोग को दर्शाता है। केवल 10% जन्म घर पर हुए, और लगभग 97% प्रसव सामान्य (प्राकृतिक) तरीके से हुए।

हालाँकि, इस सर्वेक्षण से प्रजनन स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता में कमी का भी पता चला है। लगभग 44% महिलाएँ गर्भनिरोधक तरीकों से अवगत नहीं थीं, और 56% महिलाएँ मासिक धर्म स्वच्छता के उचित तरीकों का पालन नहीं कर रही थीं। आहार के मामले में, लगभग 72% महिलाओं ने मिश्रित आहार लेने की बात कही, जिसमें शाकाहारी और मांसाहारी दोनों तरह के भोजन शामिल हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि लगभग 15% महिलाओं को किसी न किसी प्रकार की लत थी, जिसमें मुख्य रूप से गुटखा या पान मसाला का सेवन शामिल था।

ये निष्कर्ष इस बात पर जोर देते हैं कि जहाँ स्वास्थ्य सेवाएँ, जैसे संस्थागत प्रसव (डिलीवरी), बेहतर हो रही हैं, वहीं इन समुदायों में परिवार नियोजन, मासिक धर्म स्वच्छता और स्वस्थ जीवनशैली के बारे में अधिक जागरूकता की अभी भी आवश्यकता है। आवास और स्वच्छता अभी भी चिंता के विषय बने हुए हैं। जहाँ 91% परिवारों के पास शौचालय की सुविधा थी और 71% ने पर्याप्त वेंटिलेशन (हवादार व्यवस्था) होने की जानकारी दी, वहीं लगभग 80% लोग बिना शुद्ध किए गए पेयजल पर निर्भर थे और लगभग 80% के पास खुली नाली (ड्रेनेज) प्रणाली थी।

बच्चों में टीकाकरण कवरेज लगभग 95% था। हालांकि, 6–12 वर्ष आयु के लगभग 21% बच्चे स्कूल नहीं जा रहे थे। श्वसन तंत्र के संक्रमण सबसे सामान्य बार-बार होने वाली बीमारी (16.5%) थे, इसके बाद त्वचा और जठरांत्र (पाचन तंत्र) संक्रमण आते हैं। विकास के मूल्यांकन से पता चला कि लगभग 93% बच्चों की लंबाई उनकी आयु के अनुसार सामान्य थी, लेकिन 19% बच्चे कम वजन (underweight) के थे। गंभीर तीव्र कुपोषण बहुत कम (0.16%) पाया गया, और कुल मिलाकर 99.8% बच्चों का विकासात्मक स्तर सामान्य था।

निष्कर्ष बताते हैं कि जहां संस्थागत प्रसव और टीकाकरण सेवाओं की पहुंच काफी मजबूत है, वहीं स्वच्छता, मासिक धर्म स्वच्छता शिक्षा और बाल पोषण के क्षेत्रों में अभी भी केंद्रित प्रयासों की आवश्यकता है। अध्ययन का सुझाव है कि प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल को मजबूत करना, जिसमें सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य आयुर्वेद-आधारित सहायता शामिल हो, मौजूदा सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों का पूरक बन सकता है।

संदर्भ स्रोतः शर्मा डी., सिंह एन.के., श्रीवास्तव पी., भारती पी.एल., प्रकाश ओ., गवली के., माता एस., ओटा एस., माखीजा डी., शाही वी.के., मनथोत्ताथिल ए.। अनुसूचित जाति समुदाय की महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य-संबंधी जनसांख्यिकीय प्रोफ़ाइल पर एक प्रेक्षणात्मक (ऑब्ज़र्वेशनल) क्रॉस-सेक्शनल सर्वेक्षण अध्ययन, ग्वालियर जिला, मध्य प्रदेश, भारत। जर्नल ऑफ रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंसेज़। 2026 जनवरी 1; 10(1): 27–36।

संदर्भ लिंकः (https://journals.lww.com/jras/fulltext/2026/01000/an_observational_cross_sectional_survey_study_on.3.aspx

क्लीनिकल कंसेंसस (नैदानिक सहमति) सुरक्षित और मानकीकृत 'मर्श नस्य' चिकित्सा के लिए एक मार्ग प्रस्तुत करता है

पारंपरिक आयुर्वेदिक उपचारों को आधुनिक साक्ष्य-आधारित पद्धतियों के साथ एकीकृत करने की दिशा में एक कदम बढ़ाते हुए, हाल ही में एक व्यवहार्यता (feasibility) अध्ययन के माध्यम से 'मर्श नस्य' के लिए नैदानिक सर्वसम्मति विवरण (clinical consensus statements) विकसित किए गए हैं। मर्श नस्य आयुर्वेद की एक प्रमुख चिकित्सा प्रक्रिया है।इस पहल का उद्देश्य मानकीकृत क्लिनिकल प्रैक्टिस दिशानिर्देश स्थापित करना था, जो इस उपचार के अभ्यास, शिक्षण और मूल्यांकन के तरीके को संभावित रूप से बदल सकता है। इस शोध में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त RAND/UCLA उपयुक्तता विधि (RAM) का उपयोग किया गया, जो एक संरचित पद्धति है और वैज्ञानिक साक्ष्यों तथा विशेषज्ञों की राय को मिलाकर किसी चिकित्सीय प्रक्रिया की उपयुक्तता निर्धारित करती है। शोधकर्ताओं ने उद्देश्यपूर्ण नमूनाकरण के माध्यम से आयुर्वेद विशेषज्ञों का एक विविध पैनल तैयार किया, जिसमें भारत के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों (शहरी और ग्रामीण दोनों) से प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया गया। इस पैनल में क्लिनिकल प्रैक्टिस, अनुसंधान, शिक्षाविद् (academics) और प्रशासन जैसे विभिन्न क्षेत्रों की विशेषज्ञता को भी शामिल किया गया।

विशेषज्ञता के उच्च मानकों को बनाए रखने के लिए, इस शोध में केवल उन्हीं आयुर्वेद चिकित्सकों का चयन किया गया जिन्हें मर्श नस्य में एक दशक (10 वर्ष) से अधिक का नैदानिक अनुभव प्राप्त था। अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, शुरुआत में संपर्क किए गए 13 विशेषज्ञों में से नौ विशेषज्ञों ने भाग लेने के लिए अपनी सहमति दी। ये विशेषज्ञ शास्त्रीय आयुर्वेदिक ग्रंथों और नस्य चिकित्सा से संबंधित समकालीन वैज्ञानिक साहित्य में पारंगत थे, जो RAM (RAND/UCLA Appropriateness Method) ढांचे के तहत अनुशंसित पैनल आकार के अनुरूप थे। शोध टीम ने शास्त्रीय आयुर्वेद साहित्य, आधुनिक वैज्ञानिक अध्ययनों, चिकित्सकों के सुझावों तथा प्रमुख आयुर्वेद अस्पतालों और शिक्षण संस्थानों से प्राप्त सर्वेक्षण निष्कर्षों की विस्तृत समीक्षा के माध्यम से नैदानिक परिदृश्यों और प्रारूप श्रेष्ठ अभ्यास वक्तव्य तैयार किए। प्रकाशित आंकड़ों की सीमित उपलब्धता को देखते हुए, सिफारिशों को आकार देने में विशेषज्ञों के विचारों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(एआई द्वारा बनाई गई छवि)

अनुसंधान में कुल 75 बीपीएस (Best Practice Statements) प्रारंभ में प्रस्तावित किए गए और उन्हें दो चरणों की संरचित मूल्यांकन प्रक्रिया से गुजारा गया। इस प्रक्रिया के बाद 63 कथनों पर सहमति प्राप्त हुई, जिन्हें छह प्रमुख क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया: सामान्य सिद्धांत, प्रारंभिक प्रक्रियाएं (पूर्व कर्म), मुख्य चिकित्सीय

प्रक्रिया (प्रधान कर्म), थेरेपी के बाद की देखभाल (पश्चात कर्म), खुराक संबंधी विचार, और गुणवत्ता आश्वासन उपाय। इन सभी 63 अंतिम कथनों को नैदानिक दिशा-निर्देशों (क्लिनिकल गाइडलाइन्स) में शामिल करने के लिए उपयुक्त और वैध माना गया, जो विशेषज्ञ समूह के बीच मजबूत सहमति को दर्शाता है। शोधकर्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि दो प्रक्रियाओं—अर्थात 'तलम' (सिर के ऊपरी हिस्से/ब्रह्मरंध्र पर औषधि रखने की प्रक्रिया) और स्कैल्प (खोपड़ी) पर औषधीय चूर्ण का घर्षण—को मुख्य सिफारिशों में शामिल नहीं किया गया। विशेषज्ञों ने सुझाव दिया कि इन अभ्यासों को क्षेत्र-विशिष्ट हस्तक्षेप माना जाना चाहिए और व्यापक नैदानिक स्वीकृति से पहले इनकी व्यवहार्यता (feasibility) पर और अधिक अध्ययन की आवश्यकता पर जोर दिया।

इन निष्कर्षों से पारंपरिक चिकित्सीय प्रक्रियाओं के व्यवस्थित दस्तावेजीकरण और प्रमाणीकरण के अत्यंत महत्वपूर्ण होने पर बल मिलता है। एक संरचित, सहमति-आधारित ढांचे की स्थापना करके, यह अध्ययन मर्श नस्य के नैदानिक मानकीकरण के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करता है, जिससे इसकी विश्वसनीयता और पुनरुत्पादकता दोनों ही नैदानिक तथा शैक्षणिक परिवेश में बेहतर होती है। विशेषज्ञों के अनुसार, यह दृष्टिकोण अन्य पंचकर्म उपचारों और आयुर्वेदिक हस्तक्षेपों के लिए समान रूप से साक्ष्य-आधारित दिशानिर्देश विकसित करने के मॉडल के रूप में कार्य कर सकता है। इससे प्राप्त सिफारिशें चिकित्सकों, शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों और नीति-निर्माताओं सहित विभिन्न हितधारकों के लिए उपयोगी सिद्ध होने की अपेक्षा है। वैश्विक स्तर पर एकीकृत चिकित्सा के प्रति बढ़ती रुचि के साथ, इस प्रकार की पहल पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों और आधुनिक स्वास्थ्य मानकों के बीच सेतु बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

संदर्भः नायर डी.आर., अश्वथीकुट्टी वी., कुमार के.पी., लईक एस., खंडूरी एस., चंद्रशेखरराव बी., श्रीकांत एन., आचार्य आर. "मर्श नस्य पर नैदानिक सहमति कथन – आयुर्वेद में चिकित्सीय प्रक्रियाओं के क्लिनिकल प्रैक्टिस गाइडलाइंस विकसित करने की दिशा में एक व्यवहार्यता अध्ययन।" जर्नल ऑफ आयुर्वेद एंड इंटीग्रेटिव मेडिसिन, 1 मार्च 2026; खंड 17(2): 101298.

संदर्भ लिंकः https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S0975947625001743

हाल ही में हुए एक अध्ययन ने त्रयोदशांग गुग्गुलु की सुरक्षा के प्रमाण प्रदान किए हैं—यह एक सुप्रसिद्ध आयुर्वेदिक औषधि है, जिसका उपयोग मांसपेशियों और हड्डियों से संबंधित रोगों के उपचार के लिए किया जाता है।

कोलकाता स्थित 'केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान' के शोधकर्ताओं द्वारा किए गए एक अध्ययन में आयुर्वेदिक औषधि त्रयोदशांग गुग्गुलु की सुरक्षा के प्रमाणों का मूल्यांकन किया गया है, जो जोड़ों और मांसपेशियों से संबंधित रोगों में इस औषधि के नैदानिक उपयोग के लिए आश्वासन प्रदान करता है। त्रयोदशांग गुग्गुलु एक शास्त्रीय आयुर्वेदिक योग है जो आमतौर पर जोड़ों के दर्द, जकड़न और सूजन के लिए निर्धारित किया जाता है। इसे आयुर्वेद में प्रसिद्ध जड़ी-बूटियों के संयोजन से तैयार किया जाता है, जिसमें अश्वगंधा (Withania somnifera), गिलोय/गुडूची (Tinospora cordifolia), सोंठ (Zingiber officinale) और गुग्गुलु (Commiphora wightii) के साथ-साथ अन्य सामग्री और गाय का घी शामिल है। पारंपरिक चिकित्सा में इन जड़ी-बूटियों को सूजन कम करने और जोड़ों के समग्र स्वास्थ्य में सहायता करने के लिए व्यापक रूप से महत्वपूर्ण माना जाता है।

अध्ययन के अनुसार, इस सूत्रीकरण का प्रारंभिक मूल्यांकन एक्यूट ओरल टॉक्सिसिटी (तीव्र मौखिक विषाक्तता) परीक्षण के माध्यम से किया गया, जिसमें प्रायोगिक चूहों को शरीर भार के प्रति किलोग्राम 2000 मि.ग्रा. की एकल उच्च खुराक दी गई। इसके बाद जानवरों का 14 दिनों की अवधि तक निरीक्षण किया गया, ताकि किसी भी तत्काल विषाक्त प्रभाव की पहचान की जा सके। अवलोकन अवधि के दौरान कोई मृत्यु या उपचार-संबंधी प्रतिकूल प्रभाव दर्ज नहीं किए गए, जो परीक्षण की गई खुराक पर अनुकूल तीव्र सुरक्षा प्रोफ़ाइल को दर्शाता है।

इसके बाद एक उप-क्रोनिक 90-दिवसीय बार-बार दी जाने वाली मौखिक विषाक्तता (oral toxicity) का अध्ययन किया गया, जिसमें परीक्षण पदार्थ को 250, 500 और 1000 मि.ग्रा./किग्रा. शरीर भार की खुराक स्तरों पर प्रशासित किया गया। अध्ययन की पूरी अवधि के दौरान, पशुओं की विषाक्तता के नैदानिक लक्षणों के लिए व्यवस्थित रूप से निगरानी की गई, जिसमें भोजन और पानी के सेवन में परिवर्तन, रक्त संबंधी (हेमेटोलॉजिकल) मानकों तथा जैव-रासायनिक सूचकांक शामिल थे। निष्कर्षों से यह प्रदर्शित हुआ कि शारीरिक, रक्त संबंधी या जैव-रासायनिक मानकों में खुराक-सम्बन्धी कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं पाया गया, जिससे यह संकेत मिलता है कि प्रयोगात्मक परिस्थितियों में प्रणालीगत विषाक्तता का अभाव था।

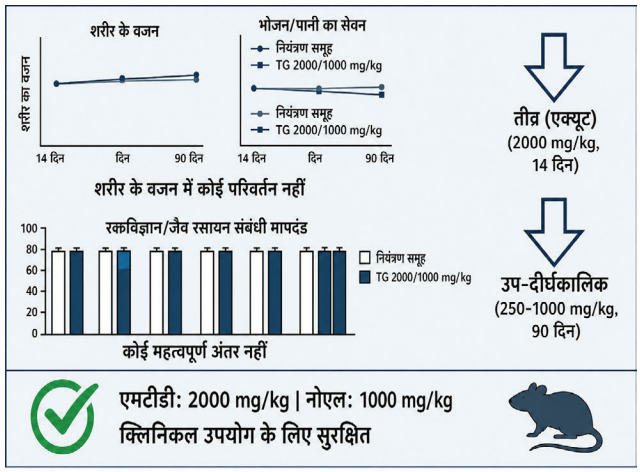

(एआई द्वारा बनाई गई छवि)

इन अवलोकनों के आधार पर, 90-दिवसीय बार-बार खुराक (repeated-dose) अध्ययन में कोई प्रतिकूल प्रभाव न देखने की सीमा (NOAEL) को 1000 मि.ग्रा./किग्रा. शरीर भार पर स्थापित किया गया। इसका अर्थ है कि इस खुराक स्तर पर पशु मॉडल में दीर्घकालिक संपर्क के दौरान कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं देखा गया।

अनुवादात्मक और सार्वजनिक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से, यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि NOAEL (नो-ऑब्जर्व्ड-एडवर्स-इफेक्ट-लेवल) एक विष विज्ञान संबंधी (toxicological) संदर्भ बिंदु है, न कि सीधे तौर पर लागू होने वाली मानवीय खुराक। मानक जोखिम आकलन प्रक्रियाओं में अनिश्चितता और सुरक्षा कारकों को शामिल किया जाता है, ताकि पशु-आधारित आंकड़ों से मानव के लिए सुरक्षित संपर्क स्तर का निर्धारण किया जा सके, जिसके परिणामस्वरूप सामान्यतः काफी कम अनुशंसित खुराक निर्धारित होती है। त्रयोदशांग गुग्गुलु के संदर्भ में, ये निष्कर्ष संकेत देते हैं कि आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में निर्धारित चिकित्सीय खुराकें सुरक्षा की एक व्यापक सीमा (wide margin of safety) के भीतर होने की संभावना रखती हैं।

जांचकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला है कि यह अध्ययन त्रयोदशांग गुग्गुलु के सुरक्षा प्रोफाइल (safety profile) का समर्थन करने वाले प्रयोगात्मक प्रमाण प्रदान करता है। हालांकि, वे इस बात पर जोर देते हैं कि इसका उपयोग केवल योग्य स्वास्थ्य सेवा विशेषज्ञों की देखरेख में ही किया जाना चाहिए, तथा बिना परामर्श के खुराक बढ़ाना या स्वयं-चिकित्सा से बचना चाहिए। यह अध्ययन

पारंपरिक आयुर्वेदिक औषधियों के वैज्ञानिक प्रमाणीकरण में योगदान देता है और विशेष रूप से मस्कुलोस्केलेटल विकारों (मांसपेशियों और हड्डियों से संबंधित रोगों) के प्रबंधन में उन्हें साक्ष्य-आधारित नैदानिक अभ्यास में तर्कसंगत रूप से शामिल करने का समर्थन करता है।

संदर्भ स्रोतः बोरा एम., सिन्हा बी.एम., गौतम एम.के., गैधानी एस.एन., उपाध्याय एस.एन., जमदग्नि एस.बी., दीक्षित ए.के. त्रयोदशांग गुग्गुलु, एक शास्त्रीय आयुर्वेदिक औषधि के प्रायोगिक पशुओं में विषाक्तता अध्ययन। टॉक्सिकोलॉजी इंटरनेशनल. 2023;30(2):131-138

संदर्भ लिंकः (https://informaticsjournals.co.in/index.php/toxi/article/view/30617/22332)

क्लिनिकल अध्ययन में डिजिटल नेत्र थकान के प्रबंधन में आयुर्वेद की भूमिका पर प्रकाश डाला गया

आज के डिजिटल युग में, बहुत से लोग कंप्यूटर स्क्रीन, मोबाइल फोन और अन्य डिजिटल उपकरणों को देखने में घंटों बिताते हैं। इसके परिणामस्वरूप, बड़ी संख्या में लोग 'कंप्यूटर विजन सिंड्रोम' (Computer Vision Syndrome) से पीड़ित हो रहे हैं, जिसे 'डिजिटल आई स्ट्रेन' के रूप में भी जाना जाता है। यह स्थिति कई असुविधाजनक लक्षण उत्पन्न कर सकती है, जैसे आँखों में सूखापन या जलन, लालिमा, धुंधला या दोहरा दिखाई देना, आँखों में थकान, सिरदर्द, रोशनी के प्रति संवेदनशीलता, अत्यधिक पानी आना, तथा गर्दन, कंधों और पीठ में दर्द।

स्क्रीन से संबंधित नेत्र विकारों के बढ़ते बोझ को देखते हुए, केंद्रीय आयुर्वेद हृदय रोग अनुसंधान संस्थान के शोधकर्ताओं ने कंप्यूटर विज़न सिंड्रोम के प्रबंधन में आयुर्वेदिक हस्तक्षेपों के मूल्यांकन हेतु किए गए एक नैदानिक अध्ययन से उत्साहजनक निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं। यह स्थिति लंबे समय तक डिजिटल उपकरणों के उपयोग से बढ़ती हुई पाई जा रही है।

कंप्यूटर विजन सिंड्रोम के अंतर्गत आंखों और शरीर से संबंधित लक्षणों की एक विस्तृत श्रृंखला आती है, जिसमें आंखों का सूखापन, जलन, लालिमा, धुंधली या दोहरी दृष्टि, आंखों की थकान, सिरदर्द, प्रकाश के प्रति संवेदनशीलता (photophobia), अत्यधिक आंसू आना और गर्दन, कंधों व पीठ में मांसपेशियों का दर्द शामिल है। इस स्थिति की बढ़ती व्यापकता तथा सुरक्षित और टिकाऊ उपचार रणनीतियों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, शोधकर्ताओं ने पारंपरिक आयुर्वेदिक उपचारों की चिकित्सीय क्षमता का आकलन करने के लिए एक नैदानिक अध्ययन की रूपरेखा तैयार की।

अध्ययन में कुल 62 मरीजों को शामिल किया गया, और सभी प्रतिभागियों के डेटा को सांख्यिकीय विश्लेषण में शामिल किया गया। अधिकांश प्रतिभागी युवा वयस्क थे, जिनमें से 40.32% 25–30 वर्ष आयु समूह में और 38.71% लोग 19–24 वर्ष के बीच थे। इस समूह में पुरुष प्रतिभागियों की संख्या 70.97% थी, और 61.3% लोग डेस्क-आधारित व्यवसायों से जुड़े थे, जो अत्यधिक स्क्रीन एक्सपोजर (स्क्रीन के सामने बिताया जाने वाला समय) को दर्शाता है।

क्लिनिकल अध्ययन में, रोगियों को हिंग्वाष्टक चूर्ण 3–5 ग्राम की मात्रा में भोजन से पहले दिन में दो बार तीन दिनों तक दिया गया। इसके बाद, विरेचन (चिकित्सीय शुद्धिकरण) के लिए रात में सोते समय गुनगुने पानी के साथ 5 ग्राम अविपत्तिकर चूर्ण दिया गया। अणु तेल के साथ नस्य चिकित्सा सात दिनों तक (दिन 1-7) प्रतिदिन सुबह प्रत्येक नथुने में 8 बूंदों की मात्रा में दी गई। अक्षि तर्पण (आंखों की विशेष चिकित्सा) महात्रिफलाद्य घृत के साथ सुबह के समय तीन लगातार दिनों तक किया गया तथा 15 दिन के अंतराल के बाद पुनः दोहराया गया (दिन 8–10 और 26–28)। महात्रिफलाद्य घृत का मौखिक सेवन (Oral administration) दिन में दो बार 5 मिलीलीटर की मात्रा में खाली पेट कराया गया—एक बार सुबह और दोबारा शाम को भोजन से तीन घंटे पहले—जो पहले दिन से शुरू होकर कुल 42 दिनों तक जारी रहा।

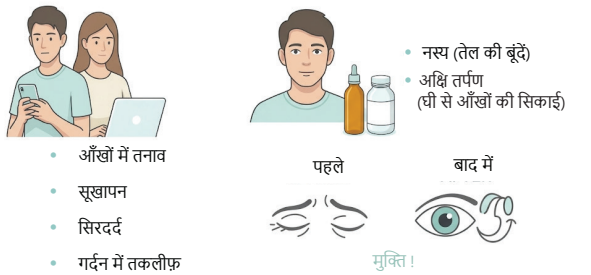

सुरक्षित और असरदार आयुर्वेदिक उपाय

(एआई द्वारा बनाई गई छवि)

नैदानिक जांच और सूचित सहमति के बाद, प्रतिभागियों को एक बहु-आयामी उपचार प्रक्रिया से गुजारा गया। इस प्रक्रिया में सात दिनों तक अणु तैल के साथ नस्य चिकित्सा (नाक के माध्यम से औषधि देना) और तीन दिनों तक महात्रिफलाद्य घृत का उपयोग करके अक्षि तर्पण (आंखों को तृप्त करने की प्रक्रिया) शामिल थी, जिसे 15 दिनों के अंतराल के बाद फिर से दोहराया गया। इसके अतिरिक्त, 42 दिनों की अवधि के लिए गुनगुने पानी के साथ दिन में दो बार महात्रिफलाद्य घृत के सेवन का सुझाव दिया गया था।

नैदानिक मूल्यांकन ने डिजिटल आई स्ट्रेन (डिजिटल नेत्र तनाव) से जुड़ी मुख्य शिकायतों में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण सुधार प्रदर्शित किया है। पेयर्ड टी-टेस्ट (युग्मित टी-परीक्षण) के उपयोग से किए गए विश्लेषण में बेसलाइन मानों (शुरुआती स्तर) की तुलना में सभी मूल्यांकन बिंदुओं (8वें, 26वें और 42वें दिन) के साथ-साथ 56वें दिन के फॉलो-अप के दौरान भी अत्यधिक महत्वपूर्ण परिणाम ($p < 0.001$) सामने आए।विशेष रूप से, आँखों में सूखापन, जलन और अत्यधिक आँसू आने जैसे लक्षणों में 8वें दिन ही 1% सार्थकता स्तर पर महत्वपूर्ण सुधार देखा गया, जबकि आँखों के लाल होने (redness) में सुधार इस शुरुआती चरण में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं था।प्रतिभागियों ने आँखों की थकान, सिरदर्द, धुंधली दृष्टि, सूखापन, जलन और अत्यधिक आँसू आने की समस्या में भारी कमी दर्ज की, और कुछ व्यक्तियों को चिकित्सा के पहले सप्ताह के भीतर ही लक्षणों में राहत का अनुभव हुआ। वस्तुनिष्ठ निष्कर्षों ने टियर फिल्म स्थिरता में भी सुधार का संकेत दिया, जो आँखों की सतह के बेहतर स्वास्थ्य का सुझाव देता है।

उपचार पूरा होने के दो सप्ताह बाद किए गए अनुवर्ती कार्रवाई में निरंतर लाभ प्रदर्शित हुए, जो हस्तक्षेपों की संभावित दीर्घकालिक प्रभावकारिता का संकेत देते हैं। महत्वपूर्ण रूप से, पूरे अध्ययन में कोई प्रतिकूल दवा प्रतिक्रिया या सुरक्षा चिंताएं नहीं देखी गईं, जो उपचार के नियम की सहनशीलता को रेखांकित करती हैं। शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि आयुर्वेदिक हस्तक्षेप, विशेष रूप से नस्य के साथ अणु तैल और नेत्र चिकित्सा महात्रिफलाद्य घृत यह डिजिटल नेत्र तनाव के प्रबंधन के लिए सुरक्षित और प्रभावी पूरक दृष्टिकोण के रूप में काम कर सकता है। यह अध्ययन डिजिटल युग में जीवन शैली से संबंधित विकारों को दूर करने के लिए आधुनिक नैदानिक अभ्यास के साथ पारंपरिक चिकित्सा ज्ञान को एकीकृत करने की बढ़ती प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

संदर्भ स्रोतः मखीजा डी, दुआ एम, ओटा एस, जाधव एन, वेदी एस.के, भारती, शर्मा बी.एस, खंडूरी एस, राणा आर, सिंघल आर, श्रीकांत एन, धीमान के.एस। कंप्यूटर विजन सिंड्रोम के प्रबंधन में महात्रिफलाद्य घृत और अणु तैल नस्य की प्रभावकारिता का नैदानिक मूल्यांकन (क्लिनिकल इवैल्यूएशन)। जर्नल ऑफ रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंसेज़, 2018; 2(3): 156–163.

संदर्भ लिंकः https://journals.lww.com/jras/abstract/2018/02030/clinical_evaluation_of_efficacy_of_mahatriphaladya.2.aspx

केस स्टडी से पता चलता है कि आयुर्वेद अग्निकर्म (थर्मल) चिकित्सा माइग्रेन के दर्द में त्वरित राहत की क्षमता दिखाती है

माइग्रेन, एक जटिल तंत्रिका संबंधी (neurological) विकार है जो सामान्य सिरदर्द से काफी अलग है और दुनिया भर में स्वास्थ्य के लिए एक बड़ा बोझ बनी हुई है। तीव्र एकतरफा धड़कते हुए दर्द, मतली, और प्रकाश व ध्वनि के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता इसके मुख्य लक्षण हैं, जिसके कारण माइग्रेन दुनिया भर में विकलांगता (disability) के प्रमुख कारणों में से एक बन गया है। नॉन-स्टेरॉयडल एंटी-इंफ्लेमेटरी ड्रग्स (NSAIDs) और ट्रिप्टान जैसे मानक उपचारों की उपलब्धता के बावजूद, कई मरीज अपर्याप्त राहत, प्रतिकूल दुष्प्रभाव या बार-बार होने वाले हमलों की शिकायत करते हैं। हाल ही में एक क्लिनिकल केस रिपोर्ट ने अग्निकर्म की ओर ध्यान आकर्षित किया है, जो आयुर्वेद की एक प्राचीन तकनीक है। इसमें नियंत्रित थर्मल कौटरी का उपयोग किया जाता है, जो तीव्र माइग्रेन के हमलों के लिए एक संभावित त्वरित-प्रतिक्रिया हस्तक्षेप हो सकता है। आयुर्वेद में पारंपरिक रूप से पुराने मस्कुलोस्केलेटल दर्द (मांसपेशियों और हड्डियों का दर्द) के प्रबंधन के लिए उपयोग किए जाने वाले 'अग्निकर्म' में एक गर्म धातु के उपकरण (शलाका) का उपयोग किया जाता है, जिसे त्वचा पर निर्धारित बिंदुओं पर थोड़े समय के लिए स्पर्श कराया जाता है।

यह रिपोर्ट 10 साल से बार-बार होने वाले माइग्रेन (आधे सिर का दर्द) से पीड़ित एक 58 वर्षीय महिला के मामले का दस्तावेजीकरण करती है। वह तीन दिनों से चल रहे एक तीव्र प्रकरण (acute episode) के दौरान अस्पताल आई थी, जिस पर पारंपरिक दर्द निवारक दवाओं का कोई असर नहीं हो रहा था और दर्द की तीव्रता 10 में से 10 अंक दर्ज की गई थी। चिकित्सकों ने दाहिने कनपटी (temporal region) के उस स्थानीय बिंदु पर 'अग्निकर्म' प्रक्रिया की, जहाँ दर्द सबसे अधिक था। रिपोर्ट के अनुसार, इस हस्तक्षेप से लक्षणों में तेज़ी से सुधार हुआ। दो मिनट के भीतर, मरीज ने धड़कते हुए दर्द में स्पष्ट कमी का अनुभव किया, और पाँच मिनट के भीतर उसका दर्द स्तर लगभग शून्य के करीब पहुँच गया। इसके साथ ही, रोगी की प्रकाश के प्रति संवेदनशीलता (light tolerance) भी ठीक हो गई और वह बिना किसी परेशानी के अपनी आँखें खोलने में सक्षम थी।

छवि स्रोतः https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC11282372

यह प्रक्रिया अच्छी तरह से सहन की गई, और इसके प्रयोग वाली जगह पर केवल हल्का और अस्थायी कष्ट महसूस हुआ। त्वचा पर स्थानीय स्तर पर थोड़ा सा रंग फीका पड़ा, लेकिन लगभग छह सप्ताह के भीतर वह पूरी तरह से ठीक हो गया और कोई स्थायी निशान नहीं बचा। देखे गए प्रभाव के पीछे प्रस्तावित तंत्र में ट्राइजेमिनल नर्व के साथ नोसीसेप्टिव संकेतों के संशोधन को शामिल माना जाता है, जो माइग्रेन के पैथोफिज़ियोलॉजी में शामिल एक प्रमुख मार्ग है। शोधकर्ताओं का अनुमान है कि नियंत्रित तापीय उत्तेजना अस्थायी रूप से दर्द संकेतों के संचरण को बाधित या अधिरोहित कर सकती है, जिससे माइग्रेन के दौरे को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है।

एक छोटे प्रारंभिक अध्ययन से प्राप्त सहायक साक्ष्य यह संकेत देते हैं कि अग्निकर्म को आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियों के उपचारों के साथ मिलाकर उपयोग करने से माइग्रेन के दौरों की आवृत्ति तथा उससे जुड़ी संवेदी संवेदनशीलताओं दोनों में कमी आ सकती है। हालांकि, शोधकर्ता इस बात पर जोर देते हैं कि ये निष्कर्ष अभी प्रारंभिक हैं। यद्यपि इसे पारंपरिक उपचारों के विकल्प के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, अग्निकर्म तीव्र माइग्रेन प्रबंधन के लिए एक कम लागत वाला और शीघ्र प्रभाव दिखाने वाला सहायक विकल्प हो सकता है। व्यापक नैदानिक स्वीकृति की सिफारिश करने से पहले, इसकी प्रभावकारिता, सुरक्षा और अंतर्निहित तंत्र को प्रमाणित करने के लिए बड़े पैमाने पर नियंत्रित अध्ययन आवश्यक हैं।

संदर्भ स्रोतः बालकृष्णन पी, सुरेंद्रन ईएस, राज एल. एस. माइग्रेन सिरदर्द की तीव्र घटना के लिए अग्निकर्म थेरेपी के साथ तत्काल दर्द से राहत-एक केस रिपोर्ट। जर्नल ऑफ आयुर्वेद एंड इंटीग्रेटिव मेडिसिन 2024 मई 1; 15 (3): 100953।

संदर्भ लिंकः (https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC11282372/)

स्वास्थ्य प्रणाली अनुसंधान

अध्ययन में तमिलनाडु की जनजातीय समुदायों में गैर-संचारी रोगों के छिपे हुए बोझ सामने आये

क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, चेन्नई के शोधकर्ताओं द्वारा हाल ही में किए गए एक क्रॉस-सेक्शनल अध्ययन ने दक्षिण भारतीय राज्य तमिलनाडु में अनुसूचित जनजाति (ST) आबादी के सामने आने वाली स्वास्थ्य चुनौतियों पर नया प्रकाश डाला है। यह अध्ययन सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन, पर्यावरणीय जोखिम कारकों और गैर-संचारी रोगों (NCDs) के बढ़ते बोझ के बीच एक जटिल अंतर्संबंध को प्रकट करता है। राज्य की कुल जनसंख्या का केवल 1.1% (लगभग 7.95 लाख व्यक्ति) होने के बावजूद, ये समुदाय गुणवत्तापूर्ण और किफायती स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच के मामले में आज भी काफी पीछे हैं।

अगस्त 2020 और मार्च 2021 के बीच आयोजित इस अध्ययन में तिरुवल्लूर और तिरुवन्नामलाई जिलों के आठ अनुसूचित जनजाति (ST) बहुल पंचायत क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया गया। शोधकर्ताओं ने घर-घर जाकर और संरचित साक्षात्कार (structured interviews) के माध्यम से 1,729 परिवारों के 7,074 व्यक्तियों का सर्वेक्षण किया। इसका उद्देश्य स्वास्थ्य के सामाजिक-जनसांख्यिकीय और पर्यावरणीय कारकों के साथ-साथ गैर-संचारी रोगों (NCD) के प्रसार का आकलन करना था।

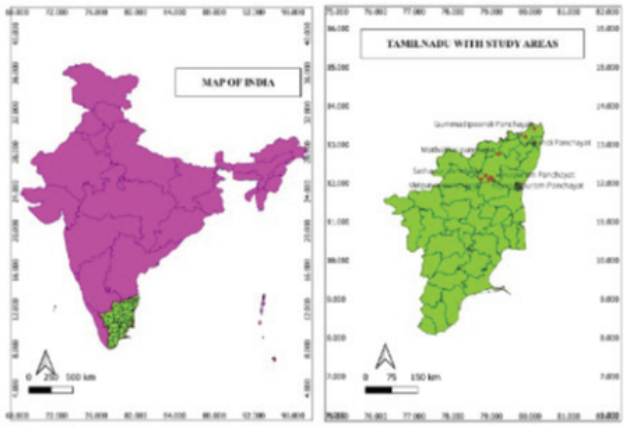

छवि स्रोत: https://www.ijam.co.in/index.php/ijam/article/view/5698/1401

निष्कर्षों से पता चला है कि सर्वेक्षण में शामिल आबादी का 8.98% हिस्सा कम से कम एक गैर-संचारी रोग (NCD) से पीड़ित था। इनमें ऑस्टियोआर्थराइटिस (अस्थिसंधिशोथ) (7.39%) सबसे प्रचलित बीमारी के रूप में उभरी, जिसके बाद मधुमेह (1.46%) का स्थान रहा, जबकि स्ट्रोक और अस्थमा तुलनात्मक रूप से दुर्लभ थे। हालांकि ये आंकड़े मामूली लग सकते हैं, लेकिन शोधकर्ताओं ने आगाह किया है कि कम निदान (underdiagnosis) और स्वास्थ्य देखभाल तक सीमित पहुंच रोग के वास्तविक भार को छिपा सकती है।

इस अध्ययन की एक मुख्य विशेषता यहाँ की आबादी का सामाजिक-जनसांख्यिकीय (socio-demographic) विवरण था। वयस्कों में, आधे से अधिक (50.27%) लोग निरक्षर थे, जो कि राज्य के औसत की तुलना में काफी अधिक दर थी। साक्षरता संबंधी असमानताएं विशेष रूप से महिलाओं में अधिक स्पष्ट थीं। कुल जनसंख्या में स्त्री और पुरुष लगभग बराबर संख्या में विभाजित थे, और अधिकांश वयस्क (76.63%) विवाहित थे। अधिकांश प्रतिभागियों ने मध्यम शारीरिक सक्रियता की बात कही, जिसका मुख्य कारण उनके व्यवसायों की शारीरिक श्रम वाली प्रकृति थी।

अनुसंधान के अनुसार, लगभग सभी उत्तरदाताओं (99.86%) ने मांसाहारी भोजन करने की बात स्वीकार की है। यह प्रोटीन की उपलब्धता को तो दर्शाता है, लेकिन आहार में विविधता की कमी के कारण सूक्ष्म पोषक तत्वों (माइक्रोन्यूट्रिएंट्स) की कमी की संभावना भी पैदा करता है। यह स्वास्थ्य परिणामों को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों के रूप में जीवनशैली और व्यवहार संबंधी जोखिमों के उभरने का संकेत देता है। जनसंख्या में तंबाकू का उपयोग, धूम्रपान और शराब का सेवन क्रमशः 2.43%, 13.22% और 10.70% दर्ज किया गया, जो ऐसी आदतें हैं जो पुरानी बीमारियों के जोखिम को बढ़ाने के लिए जानी जाती हैं। सर्वेक्षण में पाया गया कि 60.4% घरों में पर्याप्त वेंटिलेशन (हवा की आवाजाही) की कमी थी, जबकि 99.2% घर खुली जल निकासी प्रणालियों पर निर्भर थे, जिससे पता चलता है कि पर्यावरणीय स्थितियाँ स्वास्थ्य जोखिमों को और अधिक बढ़ा देती हैं। यद्यपि 82.1% घरों में शौचालय की सुविधा थी, लेकिन उनका उपयोग कम रहा और 17.06% परिवार अभी भी खुले में शौच कर रहे थे। पीने के पानी की सुरक्षा एक और बड़ी चिंता थी: लगभग 98.8% उत्तरदाताओं ने बिना शुद्ध किया हुआ (non-purified) पानी पिया, जिससे गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल (जठरांत्र) संक्रमण के प्रति संवेदनशीलता बढ़ गई। शोधकर्ता ने यह भी पाया कि अध्ययन की गई जनसंख्या में आवासीय स्थितियाँ साधारण थीं, जहाँ लगभग आधे घरों में फूस (घास-फूस) की छतें थीं और कई घर खाना पकाने के लिए बायोमास ईंधन जैसे लकड़ी, कोयला या गोबर का उपयोग करते थे। ये सभी कारक इनडोर वायु प्रदूषण और श्वसन संबंधी समस्याओं से जुड़े होते हैं। मच्छर अगरबत्ती (मॉस्किटो कॉइल) का लगभग सार्वभौमिक उपयोग भी वेक्टर जनित रोगों (मच्छर जनित बीमारियों) और घर के अंदर की वायु गुणवत्ता को लेकर चिंताओं को दर्शाता है।

अध्ययन में बताया गया है कि इन समुदायों के बच्चों को अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। सर्वेक्षण में शामिल 2,031 बच्चों में से, 10 वर्ष से कम आयु के लगभग एक-तिहाई बच्चे स्कूल नहीं जा रहे थे। बार-बार होने वाले संक्रमणों की रिपोर्ट मिली, जिनमें श्वसन, जठरांत्र (पाचन तंत्र), और त्वचा संबंधी बीमारियाँ शामिल थीं। चिंताजनक रूप से, किसी भी बच्चे को आयरन या विटामिन जैसे पोषण संबंधी सप्लीमेंट नहीं मिल रहे थे, जिससे दीर्घकालिक विकास पर प्रभाव को लेकर चिंता बढ़ती है। किशोरियों में, 11% से अधिक में मासिक धर्म में देरी देखी गई, जो अंतर्निहित पोषण की कमी की ओर संकेत करती है।

यह अध्ययन दर्शाता है कि पर्यावरणीय और सामाजिक-आर्थिक कारक, जैसे खराब स्वच्छता, असुरक्षित पेयजल, कम साक्षरता और सीमित स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच, आपस में मिलकर आदिवासी आबादी के स्वास्थ्य परिणामों को प्रभावित करते हैं। ये निष्कर्ष व्यापक राष्ट्रीय आंकड़ों के अनुरूप हैं, जो यह संकेत देते हैं कि हाशिए पर रहने वाले समुदायों में गैर-संचारी रोगों (NCDs) का बोझ बढ़ रहा है, जबकि संक्रामक रोग और कुपोषण अभी भी बने हुए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि यद्यपि सरकारी पहल और गैर-सरकारी संगठनों ने बुनियादी ढांचे और स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार करने में प्रगति की है, फिर भी महत्वपूर्ण कमियां बनी हुई हैं। व्यवहार संबंधी कारक, जैसे स्वच्छता सुविधाओं का कम उपयोग और पोषण तथा स्वच्छता के प्रति अपर्याप्त जागरूकता, मौजूदा कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को सीमित करते रहते हैं।

जैसे-जैसे भारत संक्रामक और असंक्रामक बीमारियों के दोहरे बोझ से जूझ रहा है, यह अध्ययन इस बात की तात्कालिक आवश्यकता को उजागर करता है कि अनुसूचित जनजातियों जैसे कमजोर वर्ग देश की सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रगति में पीछे न छूट जाएं। शोधकर्ताओं ने इन चुनौतियों से निपटने के लिए लक्षित और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील हस्तक्षेपों की आवश्यकता पर जोर दिया है। सिफारिशों में जनजातीय क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच को मजबूत करना, पोषण शिक्षा को बढ़ावा देना, जल और स्वच्छता अवसंरचना में सुधार करना, तथा साक्षरता को बढ़ाना, विशेष रूप से महिलाओं के बीच, शामिल हैं। असंक्रामक रोगों (NCDs) के लिए स्क्रीनिंग कार्यक्रमों का विस्तार करना और उन्हें मौजूदा सार्वजनिक स्वास्थ्य पहलों के साथ एकीकृत करना भी शीघ्र पहचान और प्रबंधन में सहायक हो सकता है।

संदर्भ: श्रीनिवास पी., देवी के.पी., आशा एस., कृष्णा सी.एम., कचरे कल्पना, मखीजा डी., अभा शर्मा, ए. मोहम्मद कलीबथुल्ला, नारायणम श्रीकांत। तमिलनाडु के तिरुवल्लूर एवं तिरुवन्नामलाई जिलों के चयनित क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों की स्वास्थ्य एवं जनसांख्यिकीय विवरण: एक क्रॉस-सेक्शनल अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ आयुर्वेदिक मेडिसिन, खंड 16 (1), 2025; पृष्ठ 94–99।

संदर्भ लिंक: **https://www.ijam.co.in/index.php/ijam/article/view/5698**

एक प्रीक्लिनिकल अध्ययन में आयुर्वेदिक बहु-औषधीय (पॉलीहर्बल) सूत्र "श्वदंष्ट्रादि घन" ने औषधि-प्रेरित (दवाओं से होने वाली) गुर्दा (किडनी) क्षति से सुरक्षा प्रदान करने में आशाजनक परिणाम दिखाए हैं।

गुर्दे (वृक्क) शरीर में शारीरिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे द्रव और इलेक्ट्रोलाइट स्तर को नियंत्रित करते हैं, अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालते हैं, अम्ल–क्षार संतुलन बनाए रखते हैं तथा रक्तचाप के नियमन के लिए आवश्यक हार्मोन का स्राव करते हैं। हालाँकि, उनकी सीमित पुनरुत्पादन क्षमता उन्हें विषाक्त प्रभावों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील बनाती है, जिससे अक्सर दीर्घकालिक जटिलताएँ और नेफ्रोटॉक्सिसिटी (गुर्दा विषाक्तता) हो सकती है। हाल ही में किए गए एक प्रीक्लिनिकल अध्ययन ने श्वदंष्ट्रादि घन, जो एक पारंपरिक आयुर्वेदिक बहु-औषधीय (पॉलीहर्बल) फॉर्मुलेशन है, की नेफ्रोप्रोटेक्टिव (गुर्दों की सुरक्षा करने वाली) क्षमता के समर्थन में उत्साहजनक प्रमाण प्रदान किए हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि यह औषधि सामान्यतः उपयोग की जाने वाली एंटीबायोटिक दवा 'जेंटामाइसिन' से होने वाली किडनी की क्षति को कम करने में प्रभावी है।

इस संदर्भ में, शोधकर्ताओं ने इसके सुरक्षात्मक प्रभावों का इस संदर्भ में, शोधकर्ताओं ने श्वदंष्ट्रादि घन के सुरक्षात्मक प्रभावों का अध्ययन किया, जो कि गोक्षुर (ट्रिबुलस टेरेस्ट्रिस), एरण्ड (रिसिनस कम्युनिस), वरुण (क्रेटेवा नुरवाला) और शुण्ठी (जिंजर ऑफिसिनेल) के समान भागों से बना एक आयुर्वेदिक योग है। इन जड़ी-बूटियों को पारंपरिक रूप से उनके विविध औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है, जिनमें सूजन-रोधी और एंटीऑक्सीडेंट गतिविधियाँ शामिल हैं। अध्ययन की शुरुआत विस्टर चूहों में तीव्र मौखिक विषाक्तता (एक्यूट ओरल टॉक्सिसिटी) के आकलन से की गई, जिसमें यह पाया गया कि यह योग 2000 mg/kg तक की मात्रा में सुरक्षित है, और 14 दिनों की अवधि में किसी भी प्रकार की विषाक्तता या मृत्यु के संकेत नहीं देखे गए। इसके बाद, 10 दिनों तक 'जेंटामाइसिन' (gentamicin) के इंजेक्शन देकर नेफ्रोटॉक्सिसिटी (गुर्दा-विषाक्तता) को प्रयोगात्मक रूप से उत्पन्न किया गया। जेंटामाइसिन गुर्दे के ऊतकों में ऑक्सीडेटिव तनाव उत्पन्न करने के लिए जाना जाता है, जिससे लिपिड पेरॉक्सीडेशन, कोशिका झिल्ली को क्षति और गुर्दे की कार्यक्षमता में कमी होती है। यह स्थिति आमतौर पर रक्त यूरिया नाइट्रोजन (BUN), क्रिएटिनिन और प्रोटीनयूरिया (पेशाब में प्रोटीन का आना) जैसे बायोमार्करों के बढ़े हुए स्तर तथा एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम गतिविधि में कमी के रूप में प्रकट होती है।

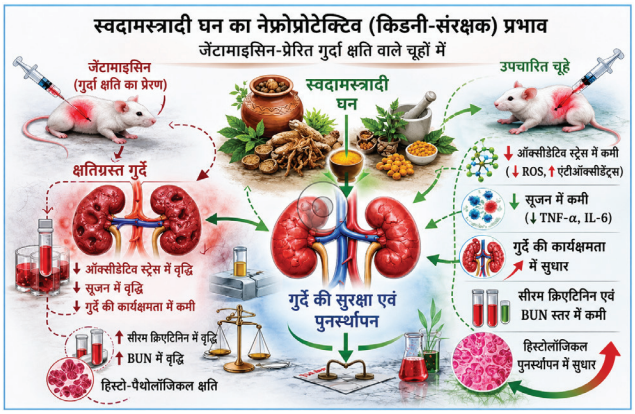

(एआई द्वारा बनाई गई छवि)

निष्कर्षों से पता चला कि श्वदंष्ट्रादि घन से उपचारित चूहों में इन रोग संबंधी परिवर्तनों में महत्वपूर्ण सुधार देखा गया। विशेष रूप से, मैलोनडायलडिहाइड (MDA) के स्तर में उल्लेखनीय कमी आई, जो गुर्दे की कोशिका झिल्ली को होने वाले ऑक्सीडेटिव नुकसान में कमी का संकेत देती है। इसके अतिरिक्त, उपचारित समूहों के शरीर के वजन में सुधार देखा गया, जो प्रणालीगत विषाक्तता की अनुपस्थिति का सुझाव देता है।

जैव-रासायनिक विश्लेषण से यह पाया गया कि BUN (ब्लड यूरिया नाइट्रोजन), सीरम क्रिएटिनिन तथा प्रोटीनयूरिया के स्तरों में महत्वपूर्ण कमी आई, विशेष रूप से उच्च खुराक वाले समूह में, जो गुर्दे की कार्यक्षमता में सुधार का संकेत देती है। इलेक्ट्रोलाइट संतुलन भी पुनर्स्थापित हुआ, जिसमें सोडियम और क्लोराइड के स्तर में कमी तथा पोटैशियम के स्तर में हल्का सामान्यीकरण देखा गया। महत्वपूर्ण रूप से, उपचारित पशुओं में एंटीऑक्सीडेंट रक्षा तंत्र मजबूत हुआ। सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज (SOD) के स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, जो स्वस्थ नियंत्रण समूह के समान स्तर तक पहुँच गई, जबकि कैटालेज़ (CAT) की सक्रियता में भी सुधार हुआ। ये एंजाइम ऑक्सीडेटिव तनाव को निष्क्रिय करने तथा गुर्दे के ऊतकों को क्षति से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हिस्टोपैथोलॉजिकल(ऊतक रोग वैज्ञानिक) परीक्षण ने इन निष्कर्षों का और अधिक समर्थन किया, जिसमें गुर्दे की संरचना में खुराक-निर्भर सुधार देखा गया। ग्लोमेरुलर कंजेशन और नेक्रोसिस जैसे अपक्षयी परिवर्तन उन जानवरों में स्पष्ट रूप से कम पाए गए जिन्हें हर्बल फॉर्मुलेशन दिया गया था, जो महत्वपूर्ण ऊतक मरम्मत का संकेत देता है। शोधकर्ताओं ने इन सुरक्षात्मक प्रभावों का श्रेय फॉर्मुलेशन में उपस्थित जैव-सक्रिय यौगिकों, जैसे टैनिन्स और क्यूमारिन्स, को दिया है। ये फाइटोकेमिकल्स अपने एंटीऑक्सिडेंट, सूजन-रोधी (एंटी-इंफ्लेमेटरी) और रक्तवाहिका-विस्तारक (वैसोडिलेटर) गुणों के लिए जाने जाते हैं, जो गुर्दों में रक्त प्रवाह में सुधार, फाइब्रोसिस में कमी और विषहरण को बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं।

इन आशाजनक परिणामों के बावजूद, अध्ययन में कुछ सीमाओं को स्वीकार किया गया है। मूल्यांकन केवल नेफ्रोटॉक्सिसिटी (गुर्दा विषाक्तता) के एक ही मॉडल तक सीमित था, जो मुख्य रूप से ऑक्सीडेटिव तनाव और एपोप्टोसिस(कोशिका मृत्यु) पर केंद्रित था। भविष्य के अध्ययनों में अन्य महत्वपूर्ण तंत्रों, जैसे कि प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया, फाइब्रोसिस की प्रगति और एंडोथेलियल कार्यप्रणाली (रक्तवाहिका कार्य) का पता लगाया जाना बाकी है। समग्र रूप से, यह अध्ययन श्वदंष्ट्रादि घन की नेफ्रोप्रोटेक्टिव (गुर्दा-संरक्षक) प्रभावशीलता के लिए प्रारंभिक प्रमाण स्थापित करता है। उपचारित चूहों में जैव-रासायनिक मापदंडों की पुनर्स्थापना और लगभग सामान्य ऊतक संरचना यह संकेत देती है कि यह फॉर्मुलेशन गुर्दों की सुरक्षा के लिए एक संभावित चिकित्सीय एजेंट के रूप में उपयोगी हो सकता है। शोधकर्ताओं ने इस बात पर जोर दिया है कि इन निष्कर्षों की पुष्टि करने और क्रोनिक किडनी रोग (CKD) मॉडल एवं मानव आबादी में इनकी प्रयोज्यता का आकलन करने के लिए क्रियात्मक अध्ययन और नैदानिक परीक्षणों सहित आगे की जांच आवश्यक है।

संदर्भः सोनम डी, विक्रम ई.एन., यादव पी, इलवरसन आर, गालिब आर, प्रदीप पी। स्वदंष्ट्रादि घन का नेफ्रोप्रोटेक्टिव (वृक्क-सुरक्षात्मक) प्रभाव: चूहों में जेंटामाइसिन-प्रेरित गुर्दे की क्षति पर आयुर्वेदिक पॉलीहर्बल फॉर्मूलेशन के सूखे जलीय काढ़ा का एक अध्ययन। जर्नल ऑफ ड्रग रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंसेज। 2026 जनवरी 1;11(1):68-76।6

संदर्भ लिंकः https://journals.lww.com/jdra/fulltext/2026/01000/nephroprotective_effect_of_swadamstradi_ghana__a.8.aspx?context=latestarticles

एगल मार्मेलोस (बिल्व) की पत्तियों के अर्क का उपयोग करके Co_3O_4 नैनोकणों का जैव-संश्लेषण, जैव-चिकित्सा और पर्यावरणीय अनुप्रयोगों के लिए आशाजनक संकेत।

एक वैज्ञानिक अध्ययन ने पर्यावरण-अनुकूल नैनोप्रौद्योगिकी की क्षमता पर प्रकाश डाला है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि पौधों के अर्क का उपयोग करके संश्लेषित कोबाल्ट ऑक्साइड नैनोकण (Co_3O_4 NPs) स्वास्थ्य सेवा और पर्यावरणीय सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। शोधकर्ताओं ने हरित संश्लेषण (ग्रीन सिंथेसिस) पद्धति अपनाई, जिसमें एगल मार्मेलोस (बेल) के पत्तों के अर्क का उपयोग किया गया। यह पौधा आयुर्वेद जैसे पारंपरिक भारतीय चिकित्सा प्रणालियों में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। पौधे के अर्क ने प्राकृतिक अपचायक (रिड्यूसिंग) तथा स्थिरीकरण (स्टेबिलाइजिंग) एजेंट दोनों के रूप में कार्य किया, जिससे पारंपरिक रासायनिक संश्लेषण विधियों के मुकाबले एक टिकाऊ और किफायती विकल्प उपलब्ध हुआ। नैनोकणों के निर्माण की पुष्टि UV–Visible स्पेक्ट्रोस्कोपी के माध्यम से की गई, जिसमें 2.1 eV का बैंड गैप ऊर्जा मान प्राप्त हुआ। एक्स-रे विवर्तन (XRD) द्वारा उनकी क्रिस्टलीय संरचना स्थापित की गई, जबकि फील्ड एमिशन स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (FESEM) ने लगभग 60.50 nm के औसत कण आकार के साथ विशिष्ट चट्टान-जैसी आकृति दर्शाई। अतिरिक्त विश्लेषण से एक स्थिर कोलॉइडल प्रणाली का संकेत मिला, जिसे –21.3 mV के जेटा पोटेंशियल द्वारा समर्थित किया गया।

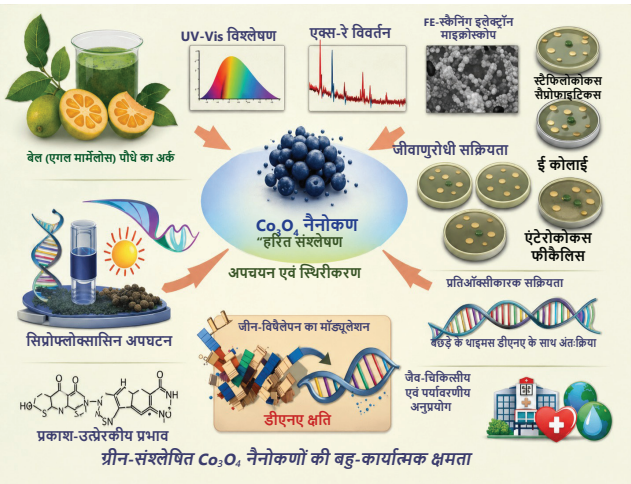

एआई द्वारा बनाई गई छवि

अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण पहलू आनुवंशिक सामग्री के साथ अंतःक्रियाओं का अध्ययन करना था। नैनोकणों ने बछड़े के थाइमस डीएनए के साथ मजबूत बाइंडिंग अभिरुचि प्रदर्शित की, जो संभवतः π–π स्टैकिंग और विद्युतस्थैतिक अंतःक्रियाओं के माध्यम से होती है। आंतरिक बाइंडिंग स्थिरांक (Kb) 4×10^{-2} गणना किया गया, जो तुलनात्मक रूप से उच्च स्तर की अंतःक्रिया को दर्शाता है और संभावित जीन-विषाक्त (जेनोटॉक्सिक) संशोधन क्षमताओं का संकेत देता है। पर्यावरणीय अनुप्रयोगों का भी मूल्यांकन किया गया। संश्लेषित नैनोकणों ने औषधीय यौगिक सिप्रोफ्लोक्सासिन के प्रभावी प्रकाश-उत्प्रेरक (फोटोकैटलिटिक) अपघटन का प्रदर्शन किया, जिसमें यूवी (UV) प्रकाश के तहत 70 मिनट के भीतर लगभग 73% अपघटन प्राप्त हुआ। यह अपशिष्ट जल उपचार और प्रदूषक हटाने में इनके संभावित उपयोग को रेखांकित करता है।

विशेषज्ञों का मानना है कि एगल मार्मेलोस (बेल), जिसका पारंपरिक रूप से सूजन, बुखार, तपेदिक (टीबी) और जठरांत्र संबंधी (गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल) विकारों के उपचार में उपयोग किया जाता रहा है, इस अध्ययन में पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक नैनोविज्ञान से जोड़कर अतिरिक्त महत्व प्रदान करता है। कुल मिलाकर, निष्कर्ष हरित-संश्लेषित Co_3O_4 नैनोकणों की बहु-कार्यात्मक प्रकृति को रेखांकित करते हैं, जो उनके संयुक्त जीवाणुरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, डीएनए-बाइंडिंग और फोटोकैटलिटिक गुणों को प्रदर्शित करते हैं। शोधकर्ताओं का मानना है कि ऐसे नैनोमैटेरियल्स को जैव-चिकित्सा, पर्यावरणीय सफाई और चिकित्सीय हस्तक्षेपों में आगे विकसित किया जा सकता है। भविष्य के अध्ययनों में प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (ROS) के निर्माण तंत्र, साइटोटॉक्सिसिटी विवरण को समझने तथा औद्योगिक अनुप्रयोगों के लिए उत्पादन के विस्तार (स्केल-अप) पर ध्यान केंद्रित किए जाने की अपेक्षा है।

संदर्भः नारायणन एल, चेल्लापांडी टी, प्रिया एस, थिप्पेस्वामी स्वामी सी, सरवनन एम, कृष्णा के वी, अशोकन एच, थल्लाडा वी, चित्रा एस, एस आर एस, घोष के. Co_3O_4 नैनोकणों का जैविक संश्लेषण: जीवाणुरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, डीएनए बाइंडिंग तथा औषधि अपघटन अध्ययन हेतु एक बहु-कार्यात्मक दृष्टिकोण। जर्नल ऑफ सोल-जेल साइंस एंड टेक्नोलॉजी, मार्च 2026; खंड 117(3): 85.

संदर्भ लिंकः https://link.springer.com/article/10.1007/s10971-026-07115-1

औषधि अनुसंधान और औषधीय पादप सर्वेक्षण

सिसस क्वाड्रैंगुलैरिस एल. कैंसर, सूजन और रोगाणुरोधी अनुसंधान में मजबूत क्षमता दिखाता है

हाल ही में किए गए एक वैज्ञानिक अध्ययन ने सिसस क्वाड्रैंगुलरिस एल. के चिकित्सीय संभावनाओं पर प्रकाश डाला है, जो एक ऐसा पौधा है जिसे पारंपरिक चिकित्सा में लंबे समय से हड्डियों के उपचार और सूजन-रोधी गुणों के लिए महत्व दिया जाता रहा है। शोधकर्ताओं ने एक व्यापक फार्माकोग्नोस्टिक(औषधीय गुणों का अध्ययन) और फाइटोकेमिकल (पादप रसायन)अध्ययन किया, जिसे उन्नत संगणकीय विश्लेषण के साथ जोड़ा गया। इस अध्ययन में इसके एक प्रमुख जैव सक्रिय यौगिक में आशाजनक औषधि-सदृश गुणों का खुलासा हुआ है।

अध्ययन की शुरुआत पौधे की प्रामाणिकता की पुष्टि तथा उसके स्थूल (मैक्रोस्कोपिक) और सूक्ष्म (माइक्रोस्कोपिक) लक्षणों के विस्तृत परीक्षण से की गई। मानक भौतिक-रासायनिक मूल्यांकन—जैसे सूखने पर होने वाली क्षति (लॉस ऑन ड्राइंग), राख का मान (ऐश वैल्यू), निष्कर्षण मान (एक्सट्रैक्टिव वैल्यू) तथा pH—ने पौध सामग्री की शुद्धता और गुणवत्ता की पुष्टि की, जिससे आगे के अनुसंधान के लिए इसकी उपयुक्तता सुनिश्चित हुई। ये मानक संदूषण या मिलावट की पहचान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और निष्कर्षों की विश्वसनीयता को मजबूत करते हैं।

छविः सिसस क्वाड्रैंगुलरिस एल. के तने के सूखे हुए कटे टुकड़े, जो इसके स्थूल लक्षणों को दर्शाते हैं।

छवि स्रोतः https://link.springer.com/article/10.1007/s44395-025-00035-z#Sec9

प्रारंभिक पादप-रसायनिक परीक्षण में फ्लेवोनॉयड्स, फेनॉल्स और टैनिन्स जैसे महत्वपूर्ण द्वितीयक उपापचयों की उपस्थिति पाई गई, जो अपने एंटीऑक्सीडेंट और चिकित्सीय गुणों के लिए व्यापक रूप से जाने जाते हैं। इसके आधार पर, शोधकर्ताओं ने पौधे के हेक्सेन एक्सट्रैक्ट (हेक्सेन अर्क) से एक प्रमुख जैव-सक्रिय घटक को अलग करने के लिए कॉलम क्रोमैटोग्राफी का उपयोग किया।

इस यौगिक की पहचान β-सिटोस्टेरॉल (β-sitosterol) के रूप में की गई, जिसे एक सफेद क्रिस्टलीय ठोस के रूप में प्राप्त किया गया और पुनःस्फटीकरण (पुनः क्रिस्टलीकरण) द्वारा और अधिक शुद्ध किया गया। उन्नत विश्लेषणात्मक तकनीकों, जैसे FTIR, प्रोटॉन तथा कार्बन NMR स्पेक्ट्रोस्कोपी, और मास स्पेक्ट्रोमेट्री के माध्यम से इसकी आणविक संरचना की पुष्टि की गई। β-सिटोस्टेरॉल एक प्रसिद्ध फाइटोस्टेरॉल है, किंतु यह अध्ययन इस औषधीय पौधे के संदर्भ में इसके विशेष महत्व पर प्रकाश डालता है।

इसके चिकित्सीय महत्व का मूल्यांकन करने के लिए, शोध टीम ने इन-सिलिको आणविक डॉकिंग अध्ययन किए। इन सिमुलेशनों ने β-सिटोस्टेरॉल और कई जैविक रूप से महत्वपूर्ण लक्ष्यों के बीच मजबूत बाइंडिंग आकर्षण प्रदर्शित किया। विशेष रूप से, इसने मानव डाइहाइड्रोफोलेट रिडक्टेज (hDHFR) के साथ उच्च बाइंडिंग ऊर्जा दिखाई, जो एंटीमाइक्रोबियल (रोगाणुरोधी) और कैंसर विरोधी दवाओं के विकास में संभावित अनुप्रयोगों का सुझाव देती है। इसी प्रकार, एंडोथेलियल नाइट्रिक ऑक्साइड सिंथेज (eNOS) के साथ महत्वपूर्ण अंतःक्रिया सूजन-रोधी और हृदय संबंधी लाभों की ओर संकेत करती है।

आगे के कम्प्यूटेशनल विश्लेषण से यह पता चला कि यह यौगिक प्रोस्टेट और अग्नाशय (पैंक्रियाटिक) कैंसर से संबंधित लक्ष्यों के साथ अनुकूल प्रभाव देखे गए हैं, साथ ही तपेदिक (ट्यूबरकुलोसिस) से संबंधित प्रोटीनों के विरुद्ध जीवाणुरोधी गतिविधि भी प्रदर्शित करता है। इस यौगिक ने ADMET प्रोफाइलिंग के माध्यम से स्वीकार्य फार्माकोकाइनेटिक और दवा-सदृश (ड्रग-लाइकनेस) गुण भी प्रदर्शित किए, जिससे यह एक संभावित चिकित्सीय एजेंट के रूप में इसकी उपयुक्तता को और मजबूत करता है।

इन आशाजनक निष्कर्षों के बावजूद, शोधकर्ता चेतावनी देते हैं कि ये परिणाम गणनात्मक मॉडल पर आधारित हैं। वे प्रभावकारिता, सुरक्षा और कार्य करने के तंत्र की पुष्टि करने के लिए प्रयोगशाला प्रयोगों, पशु अध्ययनों और नैदानिक परीक्षणों के माध्यम से आगे के सत्यापन की आवश्यकता पर जोर देते हैं।

यह अध्ययन पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों के साथ एकीकृत करने के बढ़ते महत्व को रेखांकित करता है। शास्त्रीय 'फार्माकोग्नॉसी' (भेषज-अभिज्ञान) को अत्याधुनिक संगणनात्मक उपकरणों के साथ मिलाकर, शोधकर्ता पौध-आधारित औषधियों की खोज में नए मार्ग खोल रहे हैं—जो संभावित रूप से प्राचीन उपचारों को भविष्य की दवाओं में परिवर्तित कर सकते हैं।

लेख संदर्भः घोष के., गोपाल के., नारायणन एल., कृष्णा वी.के., पांडेय ए., सौम्या एम.सी., दुर्गा के.एस., प्रिया एस., सुसीम एस.आर., चित्रा एस., मीना ए.के. "सिसस क्वाड्रैंगुलरिस एल. का व्यापक फार्माकोग्नॉस्टिक मूल्यांकन, जैव-सक्रिय यौगिकों का पृथक्करण, संरचनात्मक विश्लेषण एवं इन-सिलिको अध्ययन" डिस्कवर फार्मास्यूटिकल साइंसेज, 13 फरवरी 2026; 2(1):6.

संदर्भ लिंकः https://link.springer.com/article/10.1007/s44395-025-00035-z#Sec9

पर्यावरण अनुकूल बदलावः भावी दवाओं के लिए बीजा वृक्ष (पटेरोकार्पस मार्सुपियम रॉक्सबार्घ) में 'हार्टवुड' (अन्तःसार) के बजाय 'टहनियों' के उपयोग को अध्ययन का समर्थन।

बीजक या कीनो के नाम से प्रसिद्ध पटेरोकार्पस मार्सुपियम आयुर्वेद में लंबे समय से अपने व्यापक औषधीय लाभों के लिए जाना जाता है, विशेष रूप से मधुमेह (प्रमेह), एनीमिया (पाण्डु), मोटापा (मेददोष) और त्वचा रोगों (कुष्ठ) के उपचार में। इस वृक्ष की अन्तःसार (हार्टवुड) को इसकी औषधीय गुणों के कारण विशेष रूप से महत्व दिया जाता है। हालांकि, अन्तःसार का लगातार दोहन पौधे के अस्तित्व के लिए गंभीर खतरा पैदा करता है, क्योंकि इससे वृक्ष की संरचना कमजोर हो जाती है और यह पर्यावरणीय क्षति तथा कीटों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाता है। बीजा वृक्ष (पटेरोकार्पस मार्सुपियम रॉक्सब) पर किए गए एक अध्ययन में, पारंपरिक चिकित्सा और पर्यावरण संरक्षण दोनों को समर्थन देने के लिए शोधकर्ताओं ने यह पाया है कि इस प्रसिद्ध आयुर्वेदिक औषधीय वृक्ष की छोटी शाखाएँ पारंपरिक रूप से उपयोग किए जाने वाले अन्तःसार के लिए एक आशाजनक और सतत (सस्टेनेबल) विकल्प हो सकती हैं।

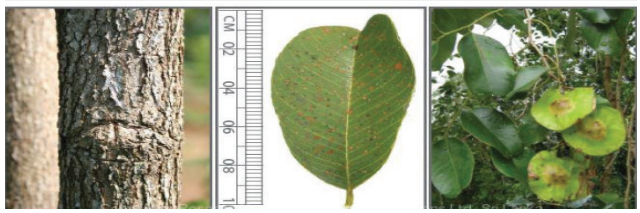

छवि स्रोतः https://www.asia-medicinalplants.info/pterocarpus-marsupium-roxb

इस चिंता को ध्यान में रखते हुए, हालिया अध्ययन में यह जांचा गया कि क्या पौधे के छोटे और कम हानिकारक हिस्से, विशेष रूप से छोटी शाखाएँ, एक प्रभावी विकल्प के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं। शोधकर्ताओं ने उन्नत तकनीकों जैसे उच्च-प्रदर्शन पतली परत क्रोमैटोग्राफी (HPTLC), उच्च-प्रदर्शन द्रव क्रोमैटोग्राफी (HPLC), तथा उच्च-रिज़ॉल्यूशन द्रव क्रोमैटोग्राफी–मास स्पेक्ट्रोमेट्री (LCMS/MS) का उपयोग करते हुए हार्टवुड (पेड़ के तने का मध्य भाग) और छोटी शाखाओं के बीच व्यापक फाइटोकेमिकल और आणविक विश्लेषण किया।

इन निष्कर्षों से दोनों पौधों के भागों के बीच उल्लेखनीय समानताएँ सामने आईं। सारकाष्ठ (हार्टवुड) और छोटी शाखाओं दोनों में लगभग समान फाइटोकेमिकल प्रोफाइल पाए गए, जिनमें कैटेचिन के तुलनीय स्तर शामिल थे। कैटेचिन एक प्रमुख जैव सक्रिय यौगिक है, जो अपने एंटीऑक्सीडेंट और मधुमेह-रोधी गुणों के लिए जाना जाता है। इससे यह संकेत मिलता है कि छोटी शाखाएँ भी पारंपरिक रूप से उपयोग किए जाने वाले अन्तःसार के समान ही चिकित्सीय क्षमता रख सकती हैं।

निष्कर्षों को और सुदृढ़ करते हुए, आणविक डॉकिंग (मॉलिक्यूलर डॉकिंग) अध्ययनों ने 21 जैव-सक्रिय यौगिकों की पहचान की, जिनमें ट्यूमर नेक्रोसिस फैक्टर-अल्फा (TNF-α) के विरुद्ध मजबूत बाइंडिंग क्षमता पाई गई, जो सूजन और दीर्घकालिक रोगों में शामिल एक प्रमुख प्रोटीन है। उल्लेखनीय रूप से, इन यौगिकों में से 12 हार्टवुड (अन्तःसार) और छोटी शाखाओं दोनों में समान रूप से पाए गए। ग्रावोलेनिक अम्ल, ऐलाटोसाइड-बी और फ्लुओसिनोलोन जैसे यौगिक दोनों पौधों के भागों में उपस्थित थे, जो उनकी साझा औषधीय प्रासंगिकता को दर्शाते हैं।

इसके अतिरिक्त, आणविक गतिशीलता सिमुलेशन ने यह दर्शाया कि कुछ फाइटोकेमिकल्स—विशेष रूप से फेनेथाइल 6-गैलॉयलग्लुकोसाइड—ने 100 नैनोसेकंड की सिमुलेशन अवधि के दौरान TNF-α के साथ उच्च स्थिरता और मजबूत अंतःक्रिया प्रदर्शित की। ये अंतःक्रियाएँ संभावित सूजन-रोधी (एंटी-इन्फ्लेमेटरी) और कैंसर-रोधी गुणों का संकेत देती हैं, जिससे पौधे के चिकित्सीय महत्व में और वृद्धि होती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि अन्तःसार (हार्टवुड) के स्थान पर छोटी शाखाओं का उपयोग करने की क्षमता पटेरोकार्पस मार्सुपियम (विजयसार) पर पारिस्थितिक दबाव को काफी हद तक कम कर सकती है, जिससे सतत (सस्टेनेबल) कटाई की प्रथाओं को बढ़ावा मिलेगा और औषधीय उपयोग के लिए इसकी निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकेगी। हालांकि परिणाम आशाजनक हैं, शोधकर्ता इस बात पर जोर देते हैं कि छोटी शाखाओं को विकल्प के रूप में अपनाने से पहले उनकी प्रभावकारिता और सुरक्षा को प्रमाणित करने के लिए आगे और औषधीय तथा नैदानिक (क्लिनिकल) अध्ययनों की आवश्यकता है। फिर भी, यह अध्ययन पारंपरिक चिकित्सा में पौधों के विभिन्न भागों के उपयोग पर पुनर्विचार करने के लिए एक मजबूत वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है। जैसे-जैसे हर्बल औषधियों की वैश्विक मांग बढ़ती जा रही है, इस प्रकार के अनुसंधान उपचारात्मक उपयोग और संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखने के महत्व पर प्रकाश डालता है।

संदर्भ: मीना ए.के., शर्मा पी., प्रकाश ओ., भारती वी., उमर टी., सिंह ए., ओझा वी., श्रीकांत एन., आचार्य आर. पटेरोकार्पस मार्सुपियम (Pterocarpus marsupium) के हृदयकाष्ठ एवं छोटी शाखाओं का फाइटोकेमिकल एवं आणविक डॉकिंग विश्लेषण: सतत वैकल्पिक उपयोगों के लिए अध्ययन। जर्नल ऑफ ड्रग रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंसेज, 2026; 11(1): 38–50.

संदर्भ लिंक: https://journals.lww.com/jdra/fulltext/2026/01000/phytochemical_and_molecular_docking_analysis_of.5.aspx?context=latestarticles

वन ज्ञानः जनजातीय ज्ञान ने केरल में छिपी औषधीय पौधों की विविधता का खुलासा किया

हाल ही में पंचकर्म के लिए राष्ट्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, चेरुथुरुथी के शोधकर्ताओं द्वारा केरल के पलक्कड़ जिले के नेनमारा वन प्रभाग में एक चिकित्सा प्रजातीय वानस्पतिक (मेडिको-एथ्नोबॉटैनिकल) अध्ययन किया गया, जिसमें स्थानीय जनजातीय समुदायों द्वारा उपयोग किए जाने वाले औषधीय पौधों से संबंधित महत्वपूर्ण पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण किया गया। पलक्कड़, केरल के सबसे बड़े जिलों में से एक है, जहाँ कई जातीय समूह निवास करते हैं, जो लंबे समय से स्वास्थ्य देखभाल और आजीविका के लिए वन संसाधनों पर निर्भर रहे हैं। नेनमारा वन प्रभाग में तीन जनजातीय समूह नौ बस्तियों में निवास करते हैं। उनके पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण करने के लिए, शोधकर्ताओं ने इन बस्तियों में मौसमी क्षेत्र सर्वेक्षण किए और समुदायों द्वारा सामान्य रूप से उपयोग किए जाने वाले पौधों के औषधीय उपयोगों को दर्ज किया। पौधों के नमूने एकत्र किए गए, उनकी पहचान की गई और वैज्ञानिक दस्तावेजीकरण के लिए हर्बेरियम नमूनों के रूप में संरक्षित किया गया। इस अध्ययन में 19 परिवारों और 26 वंशों से संबंधित 27 पौधों की प्रजातियों के औषधीय महत्व को प्रलेखित किया गया। इनमें से जिंगिबेरेसी, एस्टेरेसी, यूफोरबिएसी एपोसाइनसी, लैमियासी, एकैन्थेसी, रूटेसी और फैबेसी जैसे पौधों के परिवारों का पारंपरिक उपचारों में बहुतायत से उपयोग किया गया था।

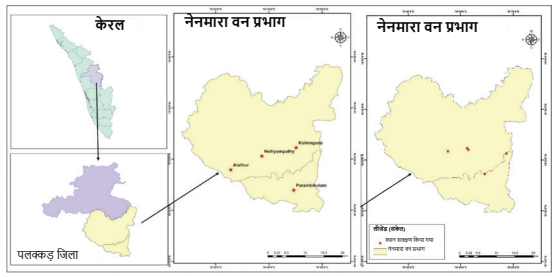

छवि स्रोतः https://journals.lww.com/jdra/fulltext/2026/01000_/ethno_botanical_composition_of_nenmara_forest.4.aspx

स्थानीय चिकित्सा पद्धतियों में पत्तियों का सबसे अधिक उपयोग किया जाता था, जो उनकी आसान उपलब्धता और चिकित्सीय महत्व को दर्शाता है। शोधकर्ताओं ने 'सोरेनसन सिमिलरिटी इंडेक्स' (SI) का उपयोग करके विभिन्न आवासों में पौधों की विविधता और 'PAST 4.03' सॉफ्टवेयर के माध्यम से टैक्सोनोमिक विशिष्टता का विश्लेषण किया। परिणामों ने बंजर भूमि (wastelands) और क्षतिग्रस्त वनों के बीच उच्चतम समानता दिखाई, जबकि औषधीय पौधों की सबसे अधिक टैक्सोनोमिक विशिष्टता क्षतिग्रस्त वनों में पाई गई। ये निष्कर्ष पारंपरिक औषधीय ज्ञान के दस्तावेजीकरण और संरक्षण के महत्व पर प्रकाश डालते हैं। वे ऐसी संरक्षण रणनीतियों की आवश्यकता पर भी जोर देते हैं जो जैव विविधता और स्वदेशी स्वास्थ्य परंपराओं दोनों की रक्षा करें, ताकि इन मूल्यवान प्राकृतिक और सांस्कृतिक संसाधनों को भविष्य की पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखा जा सके।

संदर्भ स्रोत: तुलसी आर., नायर पी.जी., दीप्ति जी.एस., रोहित के.एस., शिद्धमल्लय्या एन., वेंकटेश्वरालु बी., सुधाकर डी., श्रीकांत एन.। पलक्कड़ के नेनमारा वन प्रभाग की जातीय-वानस्पतिक संरचना। जिला, केरल. आयुर्वेदिक विज्ञान में औषधि अनुसंधान जर्नल. 2026 जनवरी 1;11(1):27-37.

संदर्भ लिंकः https://journals.lww.com/jdra/fulltext/2026/01000_एथनो_बोटानिकल_कम्पोजीशन_ऑफ_नेनमारा_वन

अध्ययन से पता चलता है कि स्थान का महत्व है: रानीखेत (हिमालय) में उगाई गई पिप्पली (पाइपर लॉन्गम लिन) उच्च औषधीय क्षमता प्रदर्शित करती है।

एक नए वैज्ञानिक अध्ययन से पता चला है कि आयुर्वेद में व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली जड़ी-बूटी पिपर लोंगम लिन (पिप्पली) की औषधीय गुणवत्ता उसके उगने के स्थान के अनुसार काफी भिन्न होती है। हिमालयी क्षेत्र में उगाए गए नमूनों में उल्लेखनीय रूप से अधिक चिकित्सीय क्षमता पाई गई है। पिप्पली, जो अपने सूजन-रोधी , एंटीऑक्सीडेंट और जैव-वर्धक गुणों के लिए जानी जाती है, सदियों से पारंपरिक चिकित्सा का एक महत्वपूर्ण आधार रही है। इसकी प्रभावशीलता मुख्य रूप से पाइपरिन (PP) और पाइपरलोंगुमाइन (PLG) जैसे प्रमुख जैव-सक्रिय यौगिकों के कारण होती है। हालांकि, नवीनतम निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि इन यौगिकों की मात्रा भौगोलिक कारकों से काफी प्रभावित होती है।

अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने भारत के तीन विभिन्न क्षेत्रों से पौधों के नमूने एकत्र किए: हिमालयी क्षेत्र में रानीखेत, केरल के पश्चिमी घाट, और बेंगलुरु। इन नमूनों पर मानकीकृत विधियों का उपयोग करते हुए व्यापक औषधीय (फार्माकोग्नोस्टिक), भौतिक-रासायनिक और फाइटोकेमिकल विश्लेषण किए गए। प्रमुख मार्करों की मात्रा निर्धारण के लिए उन्नत विश्लेषणात्मक तकनीकों, जैसे रिवर्स फेज हाई-परफॉर्मेंस लिक्विड क्रोमैटोग्राफी (RP-HPLC), का उपयोग किया गया, जबकि एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि का मूल्यांकन DPPH परीक्षणों द्वारा किया गया। परिणामों ने क्षेत्रों के अनुसार उल्लेखनीय अंतर दर्शाए।

रानीखेत से प्राप्त नमूने में पाइपरिन की सर्वाधिक सांद्रता 12.57 ± 0.25 मि.ग्रा./ग्राम तथा पाइपरलोंगुमाइन की 0.865 ± 0.012 मि.ग्रा./ग्राम पाई गई। इसके विपरीत, पश्चिमी घाट और बेंगलुरु से प्राप्त नमूनों में पाइपरलोंगुमाइन का पता नहीं चला। इसके अतिरिक्त, रानीखेत के नमूने ने श्रेष्ठ एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि प्रदर्शित की, साथ ही कुल फेनोलिक्स और फ्लेवोनॉयड्स के उच्च स्तर भी पाए गए, जो स्वास्थ्य-संरक्षण प्रभावों के लिए जाने जाते हैं।

शोधकर्ताओं ने पौधे के फलों में उल्लेखनीय रूपात्मक (मॉर्फोलॉजिकल) भिन्नताएँ भी देखीं, जिनमें आकार और रंग में विविधता शामिल है, जो पौधे की विशेषताओं पर पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रभाव को और अधिक स्पष्ट करती हैं। विशेषज्ञों का सुझाव है कि जलवायु संबंधी कारक, मिट्टी की संरचना और ऊँचाई (ऊँचाई स्तर) इन भिन्नताओं में योगदान कर सकते हैं, जो अंततः पौधे की जैव-रासायनिक संरचना और औषधीय मूल्य को प्रभावित करते हैं। निष्कर्षों से संकेत मिलता है कि विशिष्ट क्षेत्रों, विशेष रूप से रानीखेत से पिप्पली प्राप्त करने से उन हर्बल फॉर्मूलेशन की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है जो पाइपरलोंगुमाइन से संबंधित गतिविधियों पर निर्भर करते हैं।

यह अध्ययन औषधीय पौधों के मानकीकरण और गुणवत्ता नियंत्रण में भौगोलिक उत्पत्ति के अत्यंत महत्वपूर्ण महत्व को उजागर करता है। जैसे-जैसे हर्बल दवाओं की वैश्विक मांग बढ़ रही है, ऐसे निष्कर्ष बेहतर स्रोत-निर्धारण रणनीतियों को मार्गदर्शन देने की उम्मीद करते हैं, जिससे दवाओं की शक्ति (प्रभावशीलता) में स्थिरता और उपचारात्मक परिणामों में सुधार सुनिश्चित हो सके। शोधकर्ताओं का जोर है कि खेती और क्रय प्रक्रियाओं में भौगोलिक कारकों को शामिल करने से आयुर्वेद और अन्य पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों की वैज्ञानिक आधारशिला को काफी मजबूत किया जा सकता है, जिससे वे आधुनिक गुणवत्ता मानकों के अधिक अनुरूप हो सकें।

संदर्भः मिस्रो एल., जीवन ए.एस., मौर्य आर., राधाकृष्णन टी., बोइनी टी., राजीश वी.आर., रोहित के.एस., कुमार वी., मीना ए.के., श्रीकांत एन., आचार्य आर. "पाइपर लॉन्गम (Piper longum Linn.) में क्षेत्रीय विविधता का जैव-सक्रिय संघटन और एंटीऑक्सीडेंट क्षमता पर प्रभाव" लिन. रसायन विज्ञान और जैव विविधता, जनवरी 2026; 23(1): e02460.

संदर्भ लिंकः https://onlinelibrary.wiley.com/doi/abs/10.1002/cbdv.202502460

साहित्यिक अनुसंधान

सीसीआरएएस पुस्तक "प्रमेह रोग के परीक्षण हेतु आयुर्वेद आधारित नैदानिक विधियाँ" प्रमेह (मधुमेह) के आयुर्वेदिक निदान में वैज्ञानिक सटीकता प्रस्तुत करती है।

केन्द्रीय आयुर्वेदिक विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित एक पुस्तक, जिसका शीर्षक "प्रमेह रोग के परीक्षण हेतु आयुर्वेद आधारित नैदानिक विधियाँ" है, आयुर्वेद क्लिनिकल मेथड्स श्रृंखला का चौथा खंड है। यह पुस्तक प्रमेह (मधुमेह) के निदान एवं मूल्यांकन के लिए एक संरचित तथा साक्ष्य-आधारित रूपरेखा प्रस्तुत करती है, जिसे व्यापक रूप से चयापचय एवं मूत्र संबंधी विकारों से जोड़ा जाता है। वर्ष 2022 में प्रकाशित यह पुस्तक आयुर्वेद के विद्वानों, शोधकर्ताओं तथा चिकित्सकों को उनकी नैदानिक विशेषज्ञता को परिष्कृत करने में सहायक बनने के उद्देश्य से तैयार की गई है। इसमें पारंपरिक आयुर्वेदिक सिद्धांतों पर आधारित एक व्यवस्थित दृष्टिकोण अपनाया गया है, जो आधुनिक चिकित्सीय आवश्यकताओं के अनुरूप भी है।

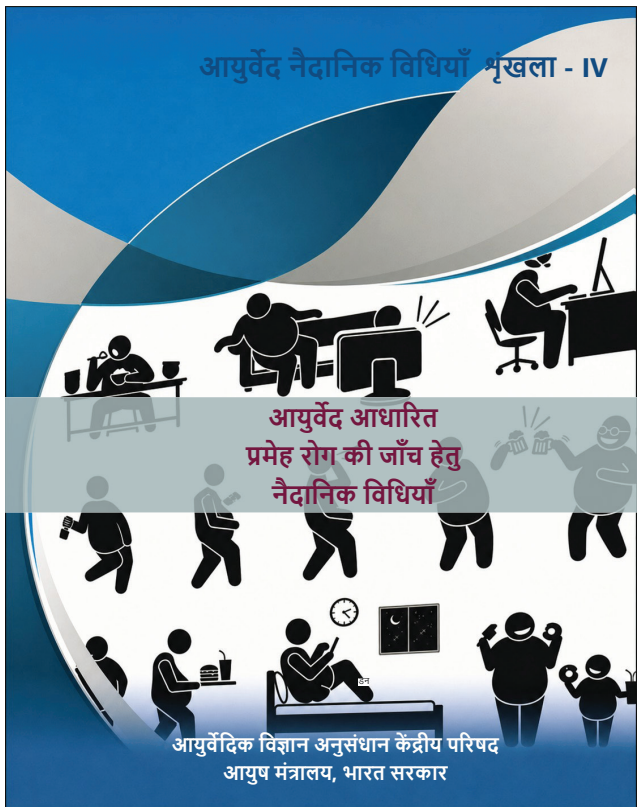

छवि स्रोतः https://publication.ccras.res.in/product/ayurveda-clinical-methods-series-iv-ayurveda-based-clinical-methods-for-examination-of-prameha-roga/

तीन व्यापक खंडों में विभाजित यह पुस्तक एक विस्तृत साहित्य समीक्षा (literature review) के साथ शुरू होती है, जिसमें आयुर्वेद के शास्त्रीय ग्रंथों जैसे चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग संग्रह, और माधव निदान का संदर्भ लिया गया है। इसके साथ ही, इसमें NAMASTE पोर्टल की मानकीकृत शब्दावली को भी सम्मिलित किया गया है, जिससे नैदानिक दस्तावेज़ीकरण और अनुसंधान में एकरूपता सुनिश्चित होती है। द्वितीय खंड में विस्तृत प्रोफॉर्मा के माध्यम से एक नवीन, बहु-स्तरीय (लेयर्ड) निदान ढांचा प्रस्तुत किया गया है। इसमें एक स्क्रीनिंग टूल शामिल है—जिसमें चिकित्सक द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्रारूप और रोगी स्व-मूल्यांकन प्रश्नावली दोनों सम्मिलित हैं—साथ ही प्रमेह-विशिष्ट निदान प्रोफॉर्मा (PSDP) भी

दिया गया है। यह द्विस्तरीय दृष्टिकोण प्रारंभिक पहचान के साथ-साथ प्रमेह के 20 उपप्रकारों के सटीक वर्गीकरण में सहायक है। यह निदान मॉडल आयुर्वेदिक मूल्यांकन के विभिन्न मानकों जैसे दोष, दूष्य, स्रोतस, और रोग परीक्षा को सम्मिलित करता है, जिससे रोग का समग्र (holistic) मूल्यांकन सुनिश्चित होता है। विशेष रूप से, मूत्र परीक्षा पर दिया गया जोर आयुर्वेदिक निदान में इसकी मूलभूत भूमिका को सुदृढ़ करता है, साथ ही पारंपरिक अवलोकनों को आधुनिक नैदानिक अंतर्दृष्टियों से जोड़ता है। तृतीय खंड एक विस्तृत उपयोगकर्ता मार्गदर्शिका के रूप में कार्य करता है, जिसमें नैदानिक अभ्यास में प्रोफार्मा के उपयोग के लिए चरण-दर-चरण निर्देश दिए गए हैं। स्पष्ट व्याख्या, शब्दशः अनुवाद, फ्लोचार्ट और चित्रात्मक उदाहरणों के माध्यम से यह मार्गदर्शिका उपयोग में सरलता और पुनरुत्पादन सुनिश्चित करती है, जो विशेष रूप से छात्रों और प्रारंभिक स्तर के चिकित्सकों के लिए अत्यंत लाभकारी है।

विशेषज्ञों का मानना है कि इस पुस्तक का एक प्रमुख योगदान शास्त्रीय आयुर्वेदिक ज्ञान को व्यावहारिक एवं मानकीकृत नैदानिक उपकरणों में रूपांतरित करना है। इससे न केवल निदान की सटीकता में सुधार होता है, बल्कि समान रूप से डेटा संग्रहण को भी समर्थन मिलता है, जो बहु-केंद्रीय अध्ययनों, नैदानिक ऑडिट तथा साक्ष्य निर्माण के लिए एक आवश्यक आवश्यकता है। अनुसंधान के दृष्टिकोण से, संरचित रूपरेखा एवं परिभाषित परिणाम चर (आउटकम वेरिएबल्स) प्रमेह पर भविष्य के नैदानिक एवं प्रेक्षणीय अध्ययनों के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करते हैं। व्यवस्थित प्रलेखन एवं विश्लेषण को सक्षम बनाकर, यह पुस्तक आयुर्वेद को आधुनिक अनुसंधान पद्धतियों के साथ एकीकृत करने को सुदृढ़ करती है।

समग्र रूप से, इस प्रकाशन को साक्ष्य-आधारित आयुर्वेद को आगे बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जा रहा है। पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक नैदानिक मानकों के साथ समन्वित करके, यह रोगी देखभाल में सुधार, शिक्षा को सुदृढ़ करने और आयुर्वेदिक प्रथाओं के वैज्ञानिक प्रमाणीकरण को बढ़ावा देने के लिए एक विश्वसनीय मार्ग प्रदान करता है। जैसे-जैसे समेकित (इंटीग्रेटिव) और व्यक्तिगत (पर्सनलाइज्ड) चिकित्सा में रुचि बढ़ती जा रही है, ऐसी पहलें वैश्विक स्वास्थ्य परिदृश्य में आयुर्वेद की स्थिति को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाती हैं।